

ॐ श्री गुरुभ्यो नमः

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

प्रथम अंक ॥ १ ॥

॥ श्रीवेदांतपदावलि ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

सर्व मुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्री मुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४२-सन १८८६ ॥

(प्रकटकृतानि सर्वेषां स्वमुखादस्यै कृतानि सन्ति ॥

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद बंदिके यह वेदांतविनोद ।
प्रकट करों जिस करि सब सज्जन पावहु मोद ॥

श्रीवेदांतविनोदमें लघुमंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिन मंथोंके नाम इस मंथके प्रत्येक अंकके अंतमें दृष्ट पड़ेगे । परमदयालु ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकी सहायतासे वेदांतविनोदके अंक प्रकट किये जाते हैं ॥

उक्त महाराजकी रचित श्रीविचारचंद्रोदय छपा है । तिस मंथकी अब तृतीयावृत्ति छपी है ॥ यह मंथ प्रयोग-त्तरूप होनेसे कंठ करनेमें सुगम नहीं है ॥ बहुत सरसों प्रपुष्पजनोंकी प्रार्थनासे महाराजकीने यह वेदांतपदावलि रची है । जिसमें श्रीविचारचंद्रोदयकी प्रत्येककलाका कवितामेही अर्थ समावेश किया है ॥

नवीन पुष्पजनों श्रीविचारचंद्रोदय । आधुनिक सार
में क्षुधावानकों भोजन जैसा भया है । ताते उक्तमंथ
यासमे यह श्रीवेदांतपदावलि तिनोको तृप्तिकी देनेवा
(न १) ॥

— श्रीमंगल —

॥ ॐ श्री गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांत विनोद ॥

प्रथम अंक ॥ १ ॥

अथ श्रीविचारचंद्रोदयकी पोडः
शकलाके अनुसार वेदांत
पदावलिः प्रारम्भ्यते ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥ १ ॥

॥ मन्दिर छंद ॥

पुरुषइच्छा विषय पुरुषार्थ जोई सोई ।
हु सनाश सुखप्राप्तिरूप मोक्ष मानहु ॥
हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।
तमिँ अपरोक्ष दृढ अदृढ दो गानहु ॥

॥ १ ॥ कोईवी रामके धुवपदमें गाया जाने दे ॥

मोक्षको साक्षात् हेतु दृढअपरोक्ष ज्ञान ।
हेतु ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥
तीन वस्तुरूप जडचेतन दो जड मिथ्या ।
माया ब्रह्मचित् "सो मैं" पीतांबर स्यानुहु ॥ १ ॥

॥ प्रपंचारोपापवाद ॥ २ ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्प्रपंच वस्तु-
ब्रह्म जानिके अवस्तु मायादिक मानिये ॥
ब्रह्म माया संबंध रु जीवईश भेद तिन ।
पद् ये अनादि तामैं ब्रह्मानंत मानिये ॥
वस्तुमैं अवस्तु कर कथन आरोप बाधि ।

॥ २ ॥ अन्वयः— ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु
विचार है ॥

॥ ३ ॥ ऐसैं निश्चय करो ॥

॥ ४ ॥ अन्वयः— अवस्तु बाधि वस्तुकथन
अपवाद मानिये ॥

अवस्तु यस्तु कथन अपवाद गानिये ॥
 गुरुके प्रसाद यह युक्ति जानि पीतांबर ।
 तैज तमकारज आरज निज जानिये ॥ २ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ १ ॥

द्रष्टा तीन देहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये ।
 तीन देह दृश्य अह अनात्म मानियो ॥
 पंचीकृत पंचभूतके पचीसतत्वनको ।
 स्थूल देह एह भोग आयतन मानियो ॥
 अपचीकृत भूतके सप्तदशतत्वनको ।
 सूक्ष्मदेह सीइ भोग साधन प्रमानियो ॥
 अज्ञान कारणदेह षट्पत दृश्य एह ।
 पीतांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य मानियो ॥ १ ॥

॥ ५ ॥ अन्वय — हे आरज (त्रिवेकी) तमका
 रज तज । निज (स्वरूप) जानिये ॥

॥ मैं पंचकोशातीत हूं ॥ ४ ॥

पंच कोशातीत मैं हूं अन्न प्राण मनोमय ।

विज्ञान आनंदमय पंचकोश नातमा ॥

स्थूलदेह अक्षय कोश लिंगदेह प्राण ।

मन रु विज्ञान तीन कोश कहें मातमा ॥

कारण आनंदमय-कोश ये कारण जड ।

विकारी विनाशी व्यभिचारीही अनातमा ॥

अज चित अविकारी नित्य व्यभिचारहीन ।

पीतांबर अनुभव करता मैं आतमा ॥ ४ ॥

॥ ६ ॥ आत्मा नहीं । अर्थ यह जो अमात्मा है ॥

॥ ७ ॥ महात्मा लिंगदेह [फू] प्राण मन अरु
विज्ञान तीनकोशरूप कहै हैं ॥

॥ ८ ॥ पंचकोश ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥ ५ ॥

अवस्था तीनको साक्षी आत्मा अन्वय याको ।

व्यभिचारी अवस्थाको ज्यैतिरेक पाईयो ॥

त्रिपुटी चतुरदश करि व्यपहार जहा ।

स्पष्ट सो जाग्रत जूठ ताकू दृश्य ध्याईयो ॥

देखे सुने भस्तुनके सस्कारसैं सृष्टि जहां ।

अस्पष्ट मतीति स्वप्न मृषा लोक गाईयो ॥

सकल करण लय होय जेहा सुषुप्ति सो ।

॥ ९ ॥ या (आत्मा) को अन्वय (पुष्पमालासि
सूत्रकी न्याई तीनअवस्थामें अनुस्यूतपना) है । यह
अर्थ है ॥

॥ १० ॥ पुष्पनकी न्याई तीनअवस्थाका परस्पर
औ अधिष्ठानतें भेद ॥

॥ ११ ॥ अन्वयः—जहां सकल करण लय होय ।
सो सुषुप्ति है ॥

पीतांबर तुरीयही प्रत्येक प्रत्याईयो ॥ ५ ॥

॥ प्रपंच मिथ्या वर्णन ॥ ६ ॥

॥ ललित छंद ॥

सकल दृश्य सोऽज्यास छोडना ।

जग आधारमें चित्त जोडना ॥

त्रय देशाहि जो जाग्रदादि हैं ।

सब प्रपंच सो भिन्न नाहि हैं ॥ ६ ॥

रजतआदि हैं सीपिमें यथा ।

नय दशा सु हैं ब्रह्ममें तथा ॥

रक्त आदिवत् दृश्य ये मृगा ।

॥ १२ ॥ अतरात्मा ॥

॥ १३ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ १४ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतीसवै
अध्यायगत गोपिका गीतकी -याई है ॥

॥ १५ ॥ तीनअवस्था ॥

शुगति कादिवत् ब्रह्म अमृता ॥ ७ ॥
 व्यभिचरं मिथो रजस आदि ज्यो ।
 इनहिकी मिथो व्येवृती तु त्यों ॥
 शुगति सुंघवत् अदुग एक जो ।
 अवेवृतीपुतो ब्रह्म आप तो ॥ ८ ॥
 शुगति कामहीं तीनें अस ज्युं ।
 अजड ब्रह्ममें तीन अस त्यों ॥

॥ १६ ॥ सत्य है ॥

॥ १७ ॥ परस्पर ॥

॥ १८ ॥ इहां आदि शब्दकरि भोदल (अव-
 रत्त) औ कायजका महण है ॥

॥ १९ ॥ भेद (अन्योन्याभाव) ॥

॥ २० ॥ पुष्पमालागे सूत्रकी न्याई ॥

॥ २१ ॥ अनुस्यूतताकरि युक्त ॥

॥ २२ ॥ सायान्ता । विशेष । कल्पितविशेष ।
 ये तीनअंश हैं ॥

उभयै अंसकूं सत्य जानिले ।

त्रैतिय त्यागदे मोक्ष तो मिले ॥ ९ ॥

भिदें भ्रमादि जो पंचधा भवं ।

त्रिविधतापता तप्त सो देवं ॥

परेशु पंचधा युक्तियों करी ।

करि विचार तूं छेद ना डरी ॥ १० ॥

॥ २३ ॥ सामान्य औ विशेष । इन दो अंशकूं ॥

॥ २४ ॥ कल्पित अंशकूं ॥

॥ २५ ॥ भेदभ्रातिसैं आदिलेके ॥ इहा आदि
शब्दकरि कर्त्ताभोक्तापनेकी भ्राति । संगभ्राति । वि-
कारभ्राति । ब्रह्मते भिन्न जगत्के सत्यताकी भ्राति ।
इन च्यारीभ्रातिनका ग्रहण है ॥

॥ २६ ॥ पांचमकारका संसार है ॥

॥ २७ ॥ बन है ॥

॥ २८ ॥ अन्वयः—पंचधा (पांचमकारकी) यु-
क्तियों (दृष्टांतरूप) परशु (कुठार) करी ॥

नहि जु जाहिमें तीन कालमें ।
 तहँहि भान ज्यै मध्यकालमें ॥
 शुभति रौप्यवत् ध्यास सो भ्रम ।
 अरैध्यान दो भांतिका क्रम ॥ ११ ॥
 द्विविधं वेम है ज्ञान अर्थको ।
 अरथभाति वा पड्डिवा वको ॥
 सकल ध्यास जे जगतमें ^३देसे ।

॥ २९ ॥ अन्वयः—सो भ्रम (अभ्यास) अरथ
 (अर्थ-ध्यास) औ ज्ञान (ज्ञानाभ्यास) [या] क्रम
 (क्रमसे) दो भांतिका हे ॥

॥ ३० ॥ अन्वयः—ज्ञान (ज्ञानाभ्यास औ)
 अर्थ (अर्थ-ध्यास) को वेम (अभ्यास) [मत्पेक]
 द्विविध है ॥

॥ ३१ ॥ वा अरथ भावि (अर्थ-ध्यास) पड्डिवा
 पट्टमकारको) वको (कहो) ॥

॥ ३२ ॥ दिखाये

सबसु याहिके बीचमें धैसे ॥ १२ ॥

निज चिदात्मरू ब्रह्म जानिके ।

सकल वेमको भूँल भानिके ॥

पैरैम मोदरू आप बूजि ले ।

इहहि मुक्ति पीतांबरो मिले ॥ १३ ॥

॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥

॥ इंद्रविर्जय छंद ॥

आत्म विशेषण हैं नु दुर्भाति ।

विधेय निषेध्य कहों निरधारे ॥

वे^{३७} सब जानि भले गुरु शास्त्र सु ।

॥ ३३ ॥ प्रवेशकू पाये हैं ॥

॥ ३४ ॥ अज्ञान ॥

॥ ३५ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकू आत्मा जानीले ॥

॥ ३६ ॥ ठुमरी औ लावनीमें गाया जावे है ॥

॥ ३७ ॥ वे विशेषण ॥

सो अपनो निजरूप निहारे ॥
 सच्चिदनन्द रु ब्रह्म स्वयंपर- ।
 काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
 द्रष्टु अरु उपद्रष्टु रु एकहि ।
 आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
 अर्थविहीन असंख्य असंग रु ।
 अद्वय लैन्मविना अविकारे ॥
 चांरि अकारविना अरु व्यक्त ।
 न मौनको विषयो नु निकारे ॥
 कर्म करीहि बडे न घटे इत ।
 हेतुहि अव्यय वेद पुकारे ॥

॥ ३८ ॥ अनन्त ॥

॥ ३९ ॥ अक्षय ॥

॥ ४० ॥ निराकार ॥

॥ ४१ ॥ अप्रमेय ॥

अक्षर नाशविना कहिये इस ।

आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥ सत्चित्आनंदका विशेषवर्णन ॥८॥

सच्चिदनंद सरूप हि मैं यह ।

सहस्रके मुखपे पहिचान्यो ॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति जु आदिक ।

तीनहुं कालहि मैं परमान्यो ॥

जाग्रत आदि-छयावधि तीनहुं ।

कालहि हों इसैं सत मान्यो ॥

तीनहुं कालविषै सब जानहुं ।

पाहित मैं चिदरूपहि जान्यो ॥ १६ ॥

मैं प्रिय हुं घन पुत्र रु पुंद्गल ।

आदिकैं त्रयकाल अंगान्यो ॥

॥ ४२ ॥ स्थूल शरीर ॥

॥ ४३ ॥ सूक्ष्म ॥

आत्म अर्थ सबे प्रिय आत्म ।
 आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥
 या हित मैं सबतें प्रियतम्मरु
 हों परमानंद दुःखहि भान्यो ॥
 देह देहादि अतीत सु आत्म ।
 पूरण ब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

॥ अवाञ्छ्यसिद्धांत वर्णन ॥ १ ॥

ब्रह्म अहै मन वानि अगोचर ।
 शास्त्र रु संत कहैं अरु छारैं ।
 वेद वदैं लछनादिक रीति रु ।
 वृत्ति विआसि जनो मन छारैं ॥
 हैं जु सदादि विषेय विशेषण ।
 वे असदादिक भिन्न कहावैं ॥

॥ ॥ ॥ अवस्था आदिकर्तें ॥

सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि^{१५} जु ।

अंस तजी परमार्थ लखावै ॥ १८ ॥

हैं जु अनंत अखंड असंग रु ।

अद्वय आदि निषेध्य रहावै ॥

वे परपंच निषेध करी अव-

शेषित वस्तु गिरा विन गावै ॥

यूं परमात्म आत्म देव ही ।

वेद रु शास्त्र सवे सुरटावै ॥

पंडितें त्यागि अभास पीतांबर ।

॥ १५ ॥ अपेक्षिक सत्य । वृत्तिज्ञान औ विषयानंद आदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ १६ ॥ वास्तवरूप ओ निरपेक्षसत्य । चेतन-रूपज्ञान औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणार्थ बोधन करे हैं ॥

॥ १७ ॥ पंडित पीतांबर कहै है कि:- आभास

वृत्ति अहं अपरोक्षहि पावै ॥ १९ ॥

॥ सामान्यविशेष चैतन्य वर्णन १०

चेतन है जु समान विशेष सु ।
 दो विध सत्य सुजान समाने ॥
 आति सरूप विशेष जु कल्पित ।
 संसृति आश्रय सो तिहि माने ॥
 ज्यो रविको प्रतिबिंब जलादिक ।
 सो रविरूप विशेष पिछानै ।
 त्यों मतिमें प्रतिबिंब परातम ।
 सो कलपीत विशेष हि जानै ॥ २० ॥
 आवत जावत लोक मलोक हि ।

(फलव्याप्तिकू) त्यागिके अहंवृत्ति । (वृत्ति व्या-
 मिकरि) अपरोक्ष जानै । यह अर्थ है ॥

॥ ४८ ॥ परमात्माका प्रतिबिंब ॥

भोगत भोग जु कैर्म निपाने ॥
 सो सच चित्तै अभास करै अरु ।
 शुद्ध समान मही नहि आने ।
 अस्ति रु भाति प्रिय सच पूरन ।
 ब्रह्म समान सु चेतन माने ॥
 नाम रू रूप तजी सत चेतन ।
 मोद पीतांबर आप पिछाने ॥ २१ ॥

॥ तत्त्वंपदार्थैक्य निरूपण ॥ ११ ॥

वाच्य रू लक्ष्य लखी तत त्वंपद ।
 लक्ष्य दुहुकर एक ददावै ॥
 भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रू ।

॥ ४९ ॥ जो कर्मरचिव भोग है । [वाक्] भोगता है ॥

॥ ५० ॥ चेतनका प्रतिचिब ॥

धर्म समेत उपाधि उहावै ॥
 जन्म धिती लय कारक मौयिक ।
 जाननहार सबी जग भावै ॥
 ईश्वर वाच्य सुहै ततपादहि ।
 ब्रह्म सुलक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥
 संसृति मानत आपहिमें पर-
 तंत्र अविद्यक अल्प जनवै ।
 त्वंपद वाच्य सु जीव विवेचित ।
 लक्ष्य सुसाक्षि उपाधि दहावै ॥
 वाच्य दुअर्थ हि भेद वि है पुनि ।
 लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
 ब्रह्म अह इस भांति जु जानत ।
 सोई पीतांबर ब्रह्माहि पावै ॥ २३ ॥

॥ ५१ ॥ माया उपाधिनान् ॥

॥ ५२ ॥ अविद्या उपाधिवान् ॥

॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकार ॥ १२ ॥

॥ तोटकछंद ॥

जिन आत्मरूप मैयो जु भले ।

तिस त्रैविध कर्म मिट सकले ॥

तैमै आवृत्ति आश्रित सचित ले ।

निज बोध सु पावक सर्व जले ॥ २४ ॥

जड चेतन गांठ विभेद बले ।

दृढराग द्वेष कपाय गले ॥

जलमै जिम लिप्त न कर्जदले ।

परसे न अगामि जु कर्म भले ॥ २५ ॥

॥ ५३ ॥ हुमरीमै गाथा जावे है ॥

॥ ५४ ॥ देख्यो ॥

॥ ५५ ॥ अज्ञानकी आवरणशक्तिके आश्रित स
चितकमोकू लेके ॥

॥ ५६ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरंभक कर्म फले ।

सुख दुःखहि मोगत होत प्रले ॥

इस भाति जु होवत जन्म विले ।

विषैरूप पीतांबर स्व विमले ॥ २६ ॥

॥ सप्तज्ञानभूमिका वर्णन ॥ १३ ॥

निज बोधकि भूमि सु सप्त अहै ।

इस भाति वैसिष्ठ मुनीश कहै ॥

शुभ साधन सपति आदि लहै ।

श्रवणादि विचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥

निदिध्यासन तीसर भूमि गहै ।

अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥

हमता ममता बिन पचम है ।

छटवीं सब वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ ५७ ॥ देखिके ॥

॥ ५८ ॥ योगवासिष्ठ ग्रन्थविषे ॥

सतमी तुरिया जु वरिष्ठित है ।

सब वृत्ति विलीन चिदात्म रहै ॥

इवै गाढ सुषुप्ति न जागत है ।

परमानंद भक्त पीतांबर है ॥ २९ ॥

॥ जीवन्मुक्ति विदेहमुक्ति वर्णन ॥ १४ ॥

जब जानत है निज रूपहि कूं ।

तब जीवन्मुक्ति समीपहि कूं ॥

भ्रमबंध निवृत्ति सदेह हि कूं ।

सुख संपत्ति होवत गेहहि कूं ॥ ३० ॥

विदवान तजे इस देहहि कूं ।

॥ ५९ ॥ गाढसुषुप्ति इव (वतु) ॥

॥ ६० ॥ तब अरीरसाहित पुरुषकूं भ्रमरूप बंधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपहीकूं (तत्काल होवै है) यह अर्थ है ॥

तव पावत मुक्ति विदेहहिक्कं ॥

तम लेश भजे सद नाशहिक्कं ।

तज देत प्रपंच अमासहिक्कं ॥ ३१ ॥

सरिती इव सागर देशहिक्कं ।

चिनमात्र मिलाय ^{६२} विशेषहिक्कं ॥

चिद होय भजे अवशेषहिक्कं ।

नहि जन्म पीतांबर शेषहिक्कं ॥ ३२ ॥

॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥ १५ ॥

॥ ललित छंद ॥ (गोपिकागीतवत्)

जन तु जानिले ^{६३} ज्ञेय अर्थकूं ।

॥ ६१ ॥ सागरदेशहिक्कं सरिता इव (नदीकी
न्याई) ॥

॥ ६२ ॥ स्थूलसूक्ष्म प्रपंचसाहित चिदाभासरूप
विक्षेपकूं ॥

॥ ६३ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूं ॥

इम पीतांबरो ज्ञानरूँ महे ॥ ३५ ॥

॥ पोलशकला वर्णन ॥ १६ ॥

निष्कलं त्रिजं वेदही वदे ।

षट् दशं कला ब्रह्ममें न वे ॥

निरवयेव जो निष्कलंक सो ।

इकरसं सदा अंगता न सो ॥ ३६ ॥

हिरण्यगर्भ औ अद्भुता भभो ।

पवन तेज कं भूमि इंद्रियो ॥

मन अनाज औ ईशकि सत्तपो ।

करमलोक नामार्मनूजपो ॥ ३७ ॥

षट् दशं कला एहि जानिले ।

जइ उपाधिको धर्म मानिले ॥

॥ ६८ ॥ बल ॥

॥ ६९ ॥ मंत्रका अप ॥

अनुगताश्रयो पुष्पसूत्रवत् ।

निज चिदात्म पीतांबरो हि सत् ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

पांचकलाहि कवित्तर्मे । पांच सवैया मांहि ॥

ललित छंदमें तीन हैं तोटकमें त्रय आंहि ॥ १ ॥

पांचकवित दशसवैया । चौदा ललित विछान ॥

नवतोटक एकत्र करि । अठतिस छंद प्रमान ॥ २ ॥

विचारचंद्रोदयकला । षोडश सार निचोड ॥

पीतांबरनै गानियो । वर षोडश पद जोड ॥ ३ ॥

जो जन यह षोडशपदी । समुज गाय मन लाय ॥

सो निजबोध सुपायके । पुनर्जन्म नहि आय ॥ ४ ॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्री विचारचंद्रोदयं शुद्धां धियं समाप्य ॥ -

विचार्येति परानंदं तत्त्वज्ञानमवाप्य ॥ ५ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत

॥ हिंदुस्थानी भाषाके पद ॥

राग समयानुसार ॥ १ ॥

रामरूप हैं मेरे सहुरु ।

रामरूप हैं मेरे रे ॥

रमत चतुर्दश लोक लीलाकृत ।

दमत दोष बहुतेरे रे ॥ टेक ॥

निजअनुभव जिन मोहि बताया ।

श्रुति स्मृति शब्दहि टेरेरे ॥

कर्णरंभ मग घले अंत तव ।

काम क्रोध लिये घेरे रे ॥ १ ॥

सत् चित् आनंद रूप स्वयं निज ।

पूरन ब्रह्म छिंदे रे ॥

सुंहीं है अम रह्यो दृषायरि ।

सुंहीं लयो तिहि बेरे रे ॥ २ ॥

संशय भ्रमादि मिटे मनके साथ ।

भये मुखात मुरोरे रे ॥

गुरुनाथू पद पन्न शोताम्बर ।

लये गये भय फेरे रे ॥ ३ ॥

राग आशा ॥ २ ॥

मो कैसें कहिये शानी ।

जाकी दृष्टि विवेक विहानी ॥ टेक ॥

हरि गुरु भक्ति क्षमादिक साधन ।

धारि न बुद्धि विषय रस सानी ।

जन्म अनत भोगि न अगानी ॥ १ ॥

मोक्षरूप साधन नाहिं जानी ।

ज्ञानरूप साधन न पिछानी ।

क्षेयवस्तु मनमें नहीं आनी ॥ २ ॥

देह अवस्था कोश जगतवै ।

चेतनको नहिं भिन्न लखानी ।

निज तत्त्व असंग न गानी ॥ ३ ॥

तत्त्वं पदको वाच्य लक्ष्य लखि ।

लक्ष्य द्रुहुनको एक न मानी ।

अज्ञान जगत नहिं मानी ॥ ४ ॥

पीताम्बर कहे संशय भ्रम तजि ।

वृत्ति न ब्रह्मरूप ठहरानी ।

जहा नहिं पहुँचे मन बानी ॥ ५ ॥

राग आशा ॥ ३ ॥

सो सज्जन कहिये ज्ञानी ।

जाकी खुलि अनुभवकी खानी ।

सो सज्जन कहिये ज्ञानी ॥ टेक ॥

साधन चारिकी धारि निसानी ।

विधिवत शरण गहो गुरु ज्ञानी ।

ब्रह्मात्मको शोधन ध्यानी ॥ १ ॥

महावाक्य अर्थ जिय आनी ।

श्रवन मनन निदिध्यास करानी ।

मान मेय संशय भ्रम हानी ॥ २ ॥

जीव रु ईश भाव विसरानी ।

बंध मोक्षकी बुद्धि बिलानी ।

अहंब्रह्म अस निश्चय ठानी ॥ ३ ॥

द्वैतबुद्धि जाकी जो नसानी ।

ज्यो, तरंग परपोटा पानी ।

सहज समाधि स्थिती ठहरानी ॥ ४ ॥

सद्गुरु बापू पदरज परसी ।

पीतांबर जु मयो ब्रह्मज्ञानी ।

गुरु सास्त्र जगत ब्रह्म जानी ॥ ५ ॥

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी.

वेदांतपुस्तकालय—कराची.

बहुतकरिके सस्कृत तथा भाषाके छपे हुये सर्व वेदांत-
विषयक मय हमारे महासे मिल सकते हैं ॥ कोई भी मय
लेनेकी इच्छावालेकू मयकी कीमत तथा डाक महसूल ज-
नाया जायगा । उत्तरके लिपे स्वयंकार्य भेजना ॥

मीबू लिखे मयनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा
मात्र पेट्रुपेएरलका डाकमोशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-
रत्नावलि तथा बड़ी अक्षरपदि अनुक्रमणिकास-

हित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदि ३ तृतीयावृत्ति २।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी. ३

श्रीसटीका अष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. २

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागदका. २॥

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०॥

श्रीपञ्चदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें १५

घोड़ेही मय रहे हैं । (बहुत करिके फेरछपनेकी नहीं)

श्रीपञ्चदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०॥

ॐ

श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

श्रीवेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

ब्रह्मनिष्ठपण्डितश्रीपीतांबरजीकी

So. 1/2 आज्ञाअनुसार

११ नवरीक सालेमहंमदनै

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा.

॥ संवत् १९४२-सन् १८८६ ॥

(प्रत्येककर्तानि सर्वहक्क स्वाधीन रखे हे)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद बंदिके यह वेदातिविनोद ।

प्रकट करो जिस करि सर्व सज्जन पावहु मोद १

श्रीवेदातविनोदमें लघुमथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिन मथोंके नाम इस मथके प्रत्येक अक्षरके अंतमें दृष्ट पढ़ने ॥ परमदयालु ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतावरजी-महाराजकी सहायतासे वेदातविनोदके अंक प्रकट किये जाते हैं ॥

वेदातपदार्थसंज्ञा नामक प्राचीन मथ है । तिसपर “पदार्थमञ्जूषा” नामक व्याख्या महात्मा मल्लचन्द्र शानीने करी है सो “पदार्थमञ्जूषा” ब्रह्मनिष्ठ पंडित श्रीपीतावरजीने शोधन करि प्रकट किया है ॥ यह लघुमथ श्रीविचारचंद्रोदयमें षोडशवर्षादिपरसे भी प्रकट किया है ॥

‘अजिब्वृत्त्वादि ६।१४०’ आदिक अक्षरादि अनुक्रमसे रखे हैं । तहां ६ का अंक पञ्चपदार्थनका सूचक है । औ १४० का अंक पदार्थसंख्याकके अनुक्रमांक जो श्रीपदार्थमञ्जूषामें रखे हैं । तिनका सूचक है ॥ जिन पुस्तकके पास पदार्थमञ्जूषा है तिनोके वास्ते यह सुखकर अनुक्रमणिका है । औ सुमुश्नक पदार्थस्मृतिमें सहायक है ॥

शरीफ मालेमहंमद.

ॐ

पदार्थमञ्जूषागत

भंगलाचरणं

ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीकृतम्.

॥ नाराचकृतम् ॥

कलं कलंक कज्जलं तमः प्रलापि सज्जलं ।

गतातिचंचलाचलं सुसंतिशीलमुज्ज्वलम् ॥

सदा सुखादिकंदलं त्रितापपापशामकं ।

नमामि ब्रह्मधामकं सत्तापुरामनामकम् ॥ १ ॥

समानदानदायकं भवाववाक्यसायकं ।

सुशुद्ध धीविधायकं मुनीन्द्र मौलिनयकम् ॥

स्वसंगगीतगायकं व्यक्त विलोकरामकं ।

नमामि ब्रह्मधामकं सत्तापुरामनामकम् ॥ २ ॥

शमस्तमादिलक्षणं मतिक्षणं स्वशिक्षणं ।

मुमुक्षुरक्षणे समं क्षमेषु वै विलक्षणम् ॥
 सुलक्ष्य लक्ष्य संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सत्पापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
 कलेशलेशवेशशून्यदेशके भवेशकं ।
 गताविशेषशेषकं द्यशेषवेषदेशकम् ॥
 परेशकं भवेशकं समस्तभूषधामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सत्पापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
 सकालकालिजालभालभेदिभानभङ्गकं ।
 प्रभिन्नखिन्ननुन्नभाविजन्ममत्त मल्लकम् ॥ ५ ॥
 सभेदखेदछेदपेदवाक्ययूथयामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सत्पापुरामनामकम् ॥ ६ ॥
 भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
 सुशुद्धसत्त्वबुद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
 स्थलोकशोकशोषकं वितोषदोषवामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सत्पापुरामनामकम् ॥ ७ ॥

सबंधुजन्योसंधुपारकारिकर्णधारकं ।
 सलोभशोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥
 स्वबालकालवारकं समाप्तसर्वकामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ७ ॥
 स्वलक्ष्यदक्षचक्षुषं स्वरूपसौख्यसंजुषं ।
 कृतार्थचेतनायुषं गतार्थगामितस्थुषम् ॥
 विभोग्यजातदुर्विषं सुषं गुणालिदामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ८ ॥
 भवाटवीविहारकारि जीवपांथपारदं ।
 सुयुक्तिमुक्तिहारसारदं सुबुद्धिशारदम् ॥
 सपीतपादकांवरो ब्रवीतितं स्वरामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ९ ॥

श्रीमन्मंगलमूर्तिपूर्तिसुयशः-

स्वानंदवान्मुलसत् ।

सौभाग्यैकसरित्पतिं प्रतिहत-

मोक्षततापत्रयम् ॥

संसारमृतिलम्पममनसा-

मुद्धारकं कागते ।

प्रत्यक्त त्वमुचितस्वरूपसुगुरुं ।

रामं भजेऽह मुदा ॥ १ ॥

।

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

॥ अथ श्री वेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

अजिह्वत्वादि ६।१४०	तलातल
अजिह्वत्व	रसातल
नपुंसकत्व	महातल
पंगुत्व	पाताल
अंधत्व	अध्यात्मताप २।१७
बधिरत्व	आधि (मानसताप)
मुग्धत्व	व्याधि (शारीरताप)
अतलादि ७।१४९	अध्यात्मादि ३।६९
अतल	इंद्रिय (अध्यात्म)
वितल	देवता (अधिदैव)
सुतल	विषय (अधिभूत)

अध्यास २।२३

अर्थाध्यास

ज्ञानाध्यास

अनात्माके धर्म

१२। १६९

अमित्य

विनाशी

अशुद्ध

नाना

क्षेत्र

आश्रित-

विकारी

परप्रकाश

हेतुमान

व्याप्य

संगी

आवृत

अनादिपदार्थ ६।१४५

जीव.

ईश

शुद्धचेतन

अविद्या

चेतनअविद्यासंबंध

तिनका संबंध

अनुबंध ४।८५

अधिकारी

विषय

प्रयोजन

संबंध

अन्तःकरण ४।८६

मन । चित्त

बुद्धि। अहंकार

अन्तःकरणदोष ३।७१

मल । आवरण

विक्षेप	वैराग्यकी
अभाव ५। १२६	उपरामकी
प्रागभाव	अवस्था ३। २९
प्रध्वंसाभाव	जाग्रत । सुषुप्ति
अन्योऽन्याभाव	स्वप्न
असंताभाव	अवस्था ७। १४६
सामयिकाभाव	अज्ञान
अरिवर्ग ६। १२८	आवरण
काम । मोह	विक्षेप
क्रोध । मद	परोक्षज्ञान
लोभ । मत्सर	अपरोक्षज्ञान
अर्थवाद ३। ६८	शोकनाश
अनुवाद	तृप्ति
गुणवाद	अवस्था ६। १३३
भूतार्थवाद	शिशु । किशोर
अवधि ३। ५३	कौमार । यौवन
बोधकी	पौगंड । जरा

असंभावना २।८

प्रमाणगत

प्रमेयगत

अहंकार २।१४

शुद्ध (सामान्य)

अशुद्ध (विशेष)

अज्ञान २।२

समष्टि । व्यष्टि

अज्ञानकी शक्ति २।५

आवरणहेतु

विक्षेपहेतु

अज्ञानके भेद ५।१२३

मायाअविद्यारूप

ज्ञानक्रियाशक्तिरूप

विक्षेपआवरणरूप

समष्टिव्यष्टिरूप

कारणरूप

आत्मा ३।६६

ज्ञानात्मा । शांतात्मा

महानात्मा

आत्माके धर्म १२।१६९

नित्य । अविक्रय

अव्यय । स्वप्रकाश

शुद्ध । हेतु

एक । व्यापक

क्षेत्रज्ञ । असंगी

आश्रय । अनावृत

आत्माके भेद ३।७२

मिथ्यात्मा । मुह्यतात्मा

गौणात्मा

आनंद ३।६०

ब्रह्मानंद

विषयानंद

वासनानंद

आन्ध्यादि ३ । ५५	ईश्वरके ज्ञान ६ । १४४
आन्ध्य । माद्य । पटुत्व	उत्पत्ति । आगति
आर्तादि भक्त ४ । ९७	प्रलय । विद्या
आर्त । अर्थार्थी	गाते । अविद्या
जिज्ञासु । ज्ञानी	उत्पत्त्यादिक्रिया ४ ।
आश्रम ४ । ८३	९८
ब्रह्मचर्य	उत्पत्ति । विकार
गृहस्थ	प्राप्ति । सत्कार
वानप्रस्थ	उद्देशादि ३ । ७५
सन्यास	उद्देश । परीक्षा
ईश्वरके भग ६ । १४३	लक्षण
समग्रऐश्वर्य	उपवायु ५ । १०८
समग्रधर्म	नाग । देवदत्त
समग्रयज्ञ	कूर्म । धनजय
समग्रश्री	कृकट
समग्रज्ञान	उपासना २ । २३
समग्रवैराग्य	सगुण । निर्गुण

उर्मि ६ । १३१

जन्म । तृषा

मरण । हर्ष

धुधा । शोक

एषणा ३ । ५५

पुत्रैषणा

वित्तैषणा

लोकैषणा

करण ३ । ३०

मन । वाणी । काय

कर्तव्यादि ३ । ७३

कर्तव्य । प्राप्तव्य

ज्ञातव्य

कर्म ३ । ३१ ।

पुण्य । पाप । मिश्र

कर्म ३ । ६१

सचित । आगामी

प्रारब्ध

कर्म ५ । १०९

निश्च । प्रायश्चित्त

नैमित्तिक । निषिद्ध

काम्य

कर्म ६ । १३७

ज्ञान । अर्चन

जप । आतिथ्य

होम । वैश्वदेव

कर्माद्रिन्द्रिय ५ । १०५

वाक् । उपस्थ

पाणि । गुद

पाद

कर्मादि ३ । ७४

कर्म । अकर्म

विकर्म

कारणवाद ३ । ४०

आरंभ । विवर्त
 परिणाम
 काल ३ । ४२
 भूत
 भविष्यत्
 वर्तमान
 कोश ५ । १०२
 अन्नमय
 प्राणमय
 मनोमय
 विज्ञानमय
 आनन्दमय.
 कौशिक ६ । १३०
 त्वक् । मेद
 मांस । मज्जा
 रुधिर । अस्थि
 क्लेश ५ । १२०

अविद्या
 आत्मता
 राम
 द्वेष
 अभिनिवेश
 ख्याति ५ । ११९
 असत्
 आत्म
 अन्यथा
 अख्याति
 अनिर्वचनीय
 गन्ध २ । १६
 सुगंध । दुर्गंध :
 गुण ३ । ४१
 सत्व । रज । तम.
 चैतन्य ७ । १४७
 ईश्वर । प्रमाण

जीव । प्रमेय	तप ।
शुद्ध । प्रमा	विसंवादाभाव
प्रमाता	दुःखनिवृत्ति
जाग्रत ३ । ६२	सुखप्राप्ति
जाग्रत जाग्रत	तत्त्व ९।१६५
जाग्रत स्वप्न	श्रोत्र । मन
जाग्रत सुषुप्ति	त्वक् । बुद्धि
जाति २ । २४	घक्षु । चित्त
पर । व्याप्य	जिह्वा । अहंकार
अपर । व्यापक	घ्राण
जीव ३ । २७	तादात्म्य ३ । ५६
पारमार्थिक (प्राज्ञ)	भ्रमज ।
व्यावहारिक (विश्व)	सहज ।
प्रातिभासिक (तैजस)	कर्मज ।
जीवन्मुक्तिके प्रयोजन	ताप ३ । ३९
५।१.२१	अध्यात्म । अधिभूत
ज्ञानरक्षा ।	अधिदैव ।

त्रिपुटी १४ । १७३

देखो वि. चं. पृष्ठ ९९

दृष्टांत ५ । ११८

शुक्तिविधौ रजत

रज्जुविधौ सर्प

स्थाणुविधौ पुरुष

गगनविधौ नीलता

मरीचिकाविधौ जल

द्रव्यादिपदार्थ ७ । १५५

द्रव्य । समवाय

गुण । अभाव

कर्म । विशेष

सामान्य ।

धर्मादि ४ । १००

धर्म । काम

अर्थ । मोक्ष

घातु ७ । १५२

रस । मज्जा

रुधिर । अस्थि

मांस । रेत

मेद

नाडिका औ देवता

१० । १६६

इडा (चंद्र) हरि

पिंगला (सूर्य) ब्रह्मा

सुषुम्णा (मध्यमा) रुद्र

गाधारी (दक्षिणनेत्र)

इंद्र

हस्तिजिह्वा (वामनेत्र)

वरुण

पूषा (दक्षिणकर्ण) ईश्वर

यशस्विनी (वामकर्ण)

ब्रह्मा

कुहू (गुदा) पृथ्वी

अलंगुसा (मेढू)	सूर्य	निःश्रेयस २ । ६
शंखिनी (नाभि)	चन्द्र	अनर्थनिवृत्ति
नादादि ३ । ६७		परमानन्दप्राप्ति
नाद । बिन्दु । कला		परमहंससंन्यास २ । १२
निग्रह २ । १३		विविदिषा । विद्वत्
क्रम । हठ		पापकर्म ३ । ३३
नियम ५ । ११, ३		उत्कृष्ट । सामान्य
शीघ्र		मध्यम
संतोष		पाश ८ । १६०
तप		दया । निदा
स्वाध्याय		शंका । कुल
ईश्वरमणिधान		भय । शील
निवृत्ति (तादात्म्यकी)		लज्जा । धन
३ । ५७		पुण्यकर्म ३ । ३२
धमज		उत्कृष्ट । सामान्य
सहज		मध्यम
कर्मेज		पुरी ८ । १५६

ज्ञानेन्द्रियपञ्चक	पृथ्वी । आकाश
कर्मेन्द्रियपञ्चक	जल । मन
अतःकरणचतुष्टय	आग्नि । बुद्धि
माणादिपञ्चक	वायु । अहंकार
भूतपञ्चक :	प्रतिबंध ३ । ३७
काम	भूत । भाषी
त्रिविधकर्म	वर्तमान
वासना	प्रतिबंधनिवृत्तिहेतु
पुरुषार्थ ४ । ८०	४ । ७९
धर्म । काम	क्षमादि
अर्थ । मोक्ष	श्रवण
पूजापात्र ४ । ९९	मनन
ब्रह्मनिष्ठ	निदिध्यासन
मुमुक्षु	प्रपञ्च ३ । ४६
हरिदास	स्थूल । सूक्ष्म । कारण
स्वधर्मनिष्ठ	प्रपञ्च २ । १
प्रकृति ८ । १५७	बाह्य । आंतर

प्रमाण ४ । ८८

प्रत्यक्ष । उपमान

अनुमान । शब्द

प्रमाण ६ । १३८

प्रत्यक्ष

अनुमान

उपमान

शब्द

अर्थापत्ति

अनुपलब्धि

प्रलय ५ । ११५

नित्यप्रलय

नैमित्तिकप्रलय

दिनप्रलय

महाप्रलय

आत्यंतिकप्रलय

प्रज्ञा २ । १०

स्थितप्रज्ञा

अस्थितप्रज्ञा

प्राणादि ५ । १०७

प्राण । उदान

अपान । समान

व्यान

प्राणायाम ३ । ५४

रेचक । कुम्भक

पूरक

प्रारब्ध ३ । ३५

इच्छा । परेच्छा

अनिच्छा

ब्रह्म ३ । २६

विराट । ईश्वर

हिरण्यगर्भ

ब्रह्मचर्यके अंग ८ । १५९

स्त्रीका दर्शन

स्पर्शन

केलि

कीर्तन

गुह्यभाषण

संकल्प

निश्चय

क्रियाजन्यसुख

ब्रह्मविदादि ४ । ९२

ब्रह्मवित्

ब्रह्मविद्वर

ब्रह्मविद्वरीयान्

ब्रह्मविद्वरिष्ठ । ११

ब्राह्मणकेवत १२ ।

१७१

ज्ञान । लज्जा

तस्य । तितिक्षा

शम । अनसूया

विपरीत ।

दम । यज्ञ

श्रुत । दान

अमात्सर्य । धैर्य

भागवतधर्म १३ । १७२

सकामकर्मके फलका

विपरीत दर्शन ।

धनगृहपुत्रादिकविषै

दुःखबुद्धि औ च-

लबुद्धि ।

परलोकविषै नश्वर-

बुद्धि ।

शब्दब्रह्म औ परब्र-

ह्मविषै कुशल गु-

रुपान्ति गमन ।

गुरुविषै ईश्वरबुद्धि औ

निष्कपट सेवा ।

परमेश्वरविषै सर्व कर्म

समर्पण ।
 भक्तिवैराग्यसहित स्व-
 रूपानुभव ।
 साधुसंग ।
 शौच । तप । तितिक्षा ।
 मौन ।
 स्वाध्याय । आर्जव ।
 ब्रह्मचर्य । अहिंसा ।
 औ दृढसमत्व ।
 सर्वत्र आत्मारूपईश्व-
 रका दर्शन ।
 कैवल्य । ग्रहनबांधना ।
 अनिकेतता । एकांत
 (विविक्त) चीरवस्त्र ।
 संतोष ।
 सर्वभूतनविषै आत्मा-
 के भगवद्भावका

दर्शन औ भगव-
 द्रूपआत्माविषै सर्व
 भूतनका दर्शन ।
 जन्मकर्म वर्णाश्रमा-
 दि करि देहविषै
 निरभिमान औ
 स्वपरबुद्धिका अ-
 भाव । .
 भूतग्राम ४ । ९१
 जरायुज । उद्विज्ज
 अंडज । स्वेदज
 भूमिका ७ । १५०
 शुभेच्छा
 सुविचारणा
 तनुमानसा
 सत्त्वापत्ति
 असंसक्ति

पदार्थाभाविनी
 तुरीयगा
 भूरादिलोक ७।१४८
 भूर् । जन
 भुवर् । तप
 स्वर । सत्य
 महर्
 भेद ५।१२५
 जीवईशका भेद
 जीवजीवका भेद
 जीवजडका भेद
 ईशजडका भेद
 जडजडका भेद
 भ्रम ५।११६
 भेद । विकार
 कर्तृत्व । सत्यत्व
 संग

भ्रम ६।१४१
 कुल । वर्ण
 गोत्र । आश्रम
 जाति । नाम
 भ्रमविवर्त दृष्टांत ५।
 ११७
 विवप्रतिविब
 लोहितस्कटिक
 घटाकाश
 रज्जुसर्प
 कनककुंडल
 भेद ८।१६१
 कुल । यौवन
 शील । विद्या
 धन । तप
 रूप । राज्य

महत्ता हेतुधर्म	अव्यक्त
१२ । १७०	अव्याकृत
धनाढ्यता । तेज	अजा
अभिजन । प्रभाव	अज्ञान
रूप । बल	तम
तप । पौरुष	तुच्छा
श्रुत । बुद्धि	अनिर्वचनीया
ओज । योग	मिश्रकर्म ३ । ३४
महायज्ञ ५ । १२२	उत्कृष्ट । सामान्य
देव । मनुष्य	मध्यम
ऋषि । भूत	मूर्ति ३ । ४३
पितर	ब्रह्मा । विष्णु । शिव
मायाकेनाम १५ । १७४	मूर्तिमद ८ । १६२
माया । सत्त्वा	पृथ्वी । आकाश
अविद्या । मूला	जल । चद्र
प्रकृति । तूला	तेज । सूर्य
शक्ति । योनी	पवन । आत्ममद

मैत्र्यादि ४।९०

मैत्री । मुदिता

करुणा । उपेक्षा

मोक्षद्वारपाल ४।१०१

शम । विचार

सतोष । सत्संग

मौनादि ७।१५१

मौन

योगासन

योग

तितिक्षा

एकातशीलता

निःस्पृहता

समता

यम ५।११२

अहिंसा । ब्रह्मचर्य

सत्य । अपरिमह

अस्तेय

युक्ति ४।९५

अध्यात्मविद्या

साधुसंग

वासनात्याग

प्राणायाम

योगभूमिका ५।११४

क्षेप । एकाग्र

विक्षेप । निरोध

मूढ

योगभूमिका ४।९४

बाणीलय

मनोलय

बुद्धिलय

अहकारलय

रस ६।१४२

मधुर । कटुक

आम्ल । कषाय
 लवण । तिक्त
 रूप ७ । १५४
 शुक्ल । हरित
 कृष्ण । कपिश
 पीत । चित्र
 रक्त
 लक्षण २ । २०
 स्वरूपलक्षण
 तटस्थलक्षण
 लक्षणदोष ३ । ७६
 अव्याप्ति । असम्भव
 अतिव्याप्ति
 लिंग ६ । १३२
 उपक्रम उपसहार
 अभ्यास
 अपूर्वता

फल
 अर्थवाद
 उपपत्ति
 लोक ३ । ४६
 स्वर्ग । मृत्यु । पाताल
 वचनादि ५ । १०६
 वचन । रति
 आदान । मलस्राग
 गमन
 वर्ण ४ । ८२
 ब्राह्मण । वैश्य
 क्षत्रिय । शूद्र
 वर्तमान प्रतिबंध ४ । ७८
 विषयासक्ति
 बुद्धिमांद्य
 कुतर्क
 विपर्ययदुराग्रह

वाक्य २ । १९

अर्थांतरवाक्य

नहावाक्य

वाद २ । १८

प्रतिविनवाद

अवच्छेदवाद

वादादि ३ । ७७

वाद । जल्प । वितंडा

वासना ३ । ४८

लोकवासना

शास्त्रवासना

देहवासना

विकार ६ । १२९

जन्म

अस्तित्वा

वृद्धि

विपरिणाम

अपक्षय

विनाश

विधिवाक्य ३ । ६९

अपूर्वविधि

नियमविधि

परिसंख्याविधि

विपरीतभावना २।९

प्रमाणगत

प्रमेयगत

विवेकादि ४ । ८४

विवेक

वैराग्य

षट्संपत्ति

मुमुक्षुता

वेद ४ । ८७

ऋग् । साम

यजुष् । अथर्वण

वेदअंग ६ । १३६

शिक्षा । निरुक्त

फलप । छन्द

व्याकरण । ज्योतिष

वेदके काण्ड ३ । ७०

कर्म । ज्ञान

उपासना

व्यसन ७ । १५३

तन । धन

मन । राज्य

क्रोध । सेवकव्यसन

विषय ।

शब्द ७ । १५

वर्णरूप

ध्वनिरूप -

शब्दप्रवृत्तिनिमित्त

४ । ८१

जाति । क्रिया

गुण । सबध

शब्दशक्तिग्रहणहेतु

८ । १६३

व्याकरण

उपमान

कोश

आप्तवाक्य

बृहद्व्यवहार

वाक्यशेष

विवरण

सिद्धपदकी सन्निधि

शब्दसंगति ७ । ७५

शक्तिवृत्ति

लक्षणावृत्ति

शब्दादि ५ । १०४

शब्द । रस

स्पर्श । गंध	शृंगारादि रस १० ।
रूप ।	१६७ ।
शमादि ६ । १३९	शृंगार । मयानक्त
शम । तितिक्षा	वीर । बीभत्स
दम । श्रद्धा	करुणा । रौद्र
उपरति । समाधान	अद्भुत । शांति
शरीर ३ । १८	हास्य ॥ प्रेमभक्ति
स्थूल । कारण	श्रवणादि ३ । ४९
सूक्ष्म	श्रवण ।
शास्त्र ६ । १३४	मनन ।
सांख्य ।	निदिध्यासन
योग ।	श्रवणादिफल ३ । ५०
न्याय ।	प्रमाणसंशयनाश
वैशेषिक	प्रमेयसंशयनाश
पूर्वमीमांसा	विपर्ययनाश
उत्तरमीमांसा	संशय २ । ७
	प्रमाणगत

प्रयेगत
 संन्यास ४ । ९३
 कुटीचक
 बहूदक
 हंस
 परमहंस
 संपत्ति २ । २१
 देवी । आसुरी
 समाधि २ । ११
 सविकल्प
 निर्विकल्प
 समाधि ६ । १२७ -
 बाह्यदृश्यानुविद्ध
 आंतरदृश्यानुविद्ध
 बाह्यशब्दानुविद्ध
 आंतरशब्दानुविद्ध
 बाह्यनिर्विकल्प

आंतरनिर्विकल्प
 समाधिके अंग ८ । १५८
 यम
 नियम
 आसन
 प्राणायाम
 प्रत्याहार
 धारणा
 ध्यान
 सविकल्पसमाधि
 समाधिविघ्न ४ । ८९
 लय । कषाय
 विक्षेप । रसास्वाद
 संबंध ३ । ३७
 संयोग । तादात्म्य
 समवाय
 संसार ९ । १६४

ज्ञाता । भोग	कात्यायन
ज्ञान । कर्ता	वैखानसोप
ज्ञेय । करण	सूक्ष्मभूत ५ । ११०
भोक्ता । क्रिया	शब्द । रस
भोग्य	स्पर्श । गंध
सुषुप्ति ३ । ६४	रूप
सुषुप्तिजाग्रत	सूक्ष्मशरीर २ । ३
सुषुप्तिस्वप्न	समष्टि । व्यष्टि
सुषुप्तिसुषुप्ति	स्थूलभूत ५ । १११
सुषुप्तादि ३ । ५९	आकाश । जल
सुषुप्ति । समाधि	वायु । पृथ्वी
सूक्ष्मा	तेज
सूत्र ६ । १३५	स्थूलशरीर २ । ४
जैमिनीय	समष्टि । व्यष्टि
आश्वलायन	स्पर्श ४ । ९६
आपस्तंब	शीत । कोमल
बौधायन	उष्ण । कठिन

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी..

वेदांतपुस्तकालय—कराची.

बहुतकरिके संस्कृत तथा भाषाके छपे हुए सर्व वेदांत-विषयक ग्रंथ हमारे यहांसे मिल सकते हैं ॥ कोई भी ग्रंथ लेनेकी इच्छावालेके ग्रंथकी कीमत तथा डाक महसूल जनाया जावेगा । उत्तरके लिये कपलार्ड भेजना ॥

नीचे लिखे ग्रंथनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र बेल्युपेएबलका डाककमीशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर. ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-
रत्नावलि तथा बड़ी अक्षरादि अनुक्रमणिकास-

हित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृत्ति २।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी. ३

श्रीमटीका अष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागदका. १।।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०।।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें १५

(मोटेही ग्रंथ रहे हैं । बहुत करिके फेर छपनेकी नहीं)

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०।।

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण.	१
श्रीपंचदशी मूलमात्र.	०॥५
श्रीईशादष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीमें.	४
श्रीबालबोध टीकासहित.	०॥५
„ उक्तग्रंथ चिन्तित कपड़ेके पूठेसहित.	१
श्रीपदार्थसंज्ञा (वेदांतपदार्थ कोश)	४
श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जर भाषा	०।-

श्रीवेदांतविनोद.

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ ति-
नमें वेदांतपदावलि तथा वेदांतपदार्थसंज्ञा छपे हैं ॥
प्रत्येक अंककी कीमत ०)५ रखी है । औ कोशवी ७
अंकका मान ६० ०)॥ पड़ेगा.

- | | |
|---|--------------------------------------|
| १ वेदांतपदावलि (श्रीविचारचं-
द्रोदयका सार) | ५ अस्त्रामक्तके पद. |
| २ वेदांतपदार्थसंज्ञा. | ६ प्रस्ताविक श्लोक अर्थ
सहित. |
| ३ सूफीओंके गजल. | ७ वेदांतस्तोत्र संग्रह अर्थ
सहित. |
| ४ देवामक्तके पद. | |

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ ऊपरि लिखे कमसे
नहीं परंतु समयसमय अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ १ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

भाषादीपिका सहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४४-५५ १८८८ ।

(प्रकटकर्तानि सर्वहक् स्वधीन रखे हें)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों जिस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कंठ करते हैं । परंतु
निष्ठाकी आछड़तामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तातैं परमफाद-
निक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीने दयाफरिके स्तो-
त्रनकी भाषा करी है । औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकू
पी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । तातैं मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस तृतीयअंकमें जितनै स्तोत्र छपे
हैं सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

औ अन्य स्तोत्र बी चतुर्थोदिअंकोंविषे छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.



तावद्गर्जति शास्त्राणि जंबुका विपिने यथा ॥
न गर्जति महाशक्तिर्यावद्देदांतकेसरी ॥ १ ॥

अर्थः—जैसे वनविपे झ्याल नामक पशुवि-
शेष तहांलगि गर्जते हैं । जहांलगि सिंह नहीं गर्ज-
ता है ॥ जैसे अन्य सांख्यन्यायादिक—शास्त्र तहां-
लगि गर्जते हैं । जहांलगि महाशक्तिमान्
वेदांतशास्त्ररूप सिंह नहीं गर्जता है ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ १ ॥

अथ श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

॥ वसंततिलका छंदः ॥

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदोत्पतत्त्वं

सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ॥

यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं

तेर्ह्य निष्कलमहं नै च भूतसंघः ॥१॥

अर्थः—१प्रातःकालमें २हृदयकमलविषे अं-
तःकरण औ तोकी वृत्तिनका साक्षी होनेकरि
अहंवृत्तिविषे स्वयंप्रकाशरूपकरि स्फुरायमान
(भासमान) । ३सच्चिदानंदमय परमहंसोकी ग-

तिलप तुरीयस्वरूप जो ४आत्मतत्त्व है । ताकूं
९में स्मरण करूं हूं ॥ कैसें कि:-६ जो स्वम जाग्रत्
अरु सुषुप्तिकूं जानता है । औ नित्य (उत्पत्ति
अरु नाशसें रहित) है । औ ७निष्कल (निर-
वयव) है । औ ८ब्रह्म (सर्वसें अधिकव्यापक
परमात्मा) है । ९सो १०में हूं । ११ अरु पंचभू-
तनका समुदाय में १२नहीं हूं ॥ १ ॥

प्रातर्भजोमि मेनसो वचसामगम्यं

वाचो विभाति निखिला यैदनुग्रहेण ॥

यैन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचु-

स्तं देवदेवमजयच्युतमोहुरग्रेषु ॥ २ ॥

अर्थ:-१प्रातःकालमें २मन अरु वाणीओंके
अविषय । औ ३सर्व ४वाणीआं ५निसके अ-
नुग्रहसें ६भान होवै हैं । औ ७जाकूं “नेतिनेति”
[प्रपंचके निषेधक] वचनोंकरिके वेद कहते है ।

३ प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥ [वेदांत

औं जाकूं ब्रह्मवेत्ते ऽदेवनका- देव अजन्मा अ-
च्युत अरु ९मुख्य १०कहते हैं । ११ताकूं
१२मैं भजता हूं ॥ २ ॥

प्रातर्नमामि तैमसः परमर्कवर्ण

पूर्ण सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ॥

यैस्मिन्निदं जगदंशेषमंशेषमूर्तौ

रंज्ज्वां भुजंगम इव प्रतिभासितं वै ॥३॥

अर्थः—१प्रातःकालमें २अज्ञानमें पर स्वप्न-

काश पूर्ण सनातनपद पुरुषोत्तम नामक । औं

३सर्व मूर्तिरूप ४जिसविषै यह ५संपूर्ण ६जगत्

७रज्जुविषै सर्पकी न्याई भासमान है । [ताकूं]

८मैं अभेदनिश्चयरूप नमस्कार करूं हूं ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप छंदः ॥

श्लोकैत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् ॥

प्रातःकाले पठेद्यस्तु स गच्छेत्परमं पदम् ४

विनोद ३] प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

५

अर्थः—१इन पुण्यरूप औ त्रिलोकीके विभूष-
णरूप २तीनश्लोकनकुं ३जो ४प्रातःकालविषै
पठन करै ५सो ६परमपदकुं ७पावै ॥ ४ ॥
॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्य-
विरचितं प्रातःस्मरणस्तोत्रं समाप्तम् ॥१॥

ॐ

अथ श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

॥ छंदः ॥

भजे गोविंदं भजे गोविंदं

भजे 'गोविंदं मूर्धपते ॥

मैत्रे सन्निहिते मेरणे

नहि नहि रसति ह्रुकुञ्करणे ॥ भज० ॥ १ ॥

अर्थः—काहू समयमें जगद्गुरु श्रीमदशंकराचार्यस्वामीजी ब्राह्मणोंके गृहविषे भिक्षाटन करनेकूं पधारे थे ॥ तहां किसी शास्त्रवास्तनाके आवेश-पाला कोइएक रुद्धब्राह्मण व्याकरणका प्रारंभ करिके “ह्रुकुञ्करणे” शब्दका घोष करता गा । तिसहूं देखिके अत्यंतकरुणाविष्ट हुये श्री-शंकर कहने लगेः—

१. मरणके रसभीषमें २. प्राप्त भये । जार्ते ४ “ह-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ ६

कृष् करणे" ५ नहीं रक्षा करै है । नहीं रक्षा करै
है यातै ६ हे मूढमते ! ७ गोविंदकूं ८ भज । ९ गो-
विंदकूं १० भज । ११ गोविंदकूं १२ भज ॥ १ ॥

बालस्तावत्क्रीडासक्त-

स्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः ॥

वृद्धस्तावच्चितामग्नः

परे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः ॥ भज० ॥ २ ॥

अर्थः—बालक है तहांलगि खेलमें आसक्त है ।

युवा है तहांलगि स्त्रीविषै प्रीतिमान् होबै है । औ

वृद्ध है तहांलगि चितामे मग्न रहै है । परंतु

परब्रह्मविषै कोई बी लग्न होता नहीं । तति

विचक्षण हुआ तूं अब गोविंदकूं भज ॥ १ ॥

अंगं^१ गलितं पलितं मुंडं^२

देशनविहीनं जातं तुंडम् ॥

वृद्धो याति शृंहित्वा दंडं^३

तदपि न मुंचसाशोपिंडम् ॥ भज० ॥ ३ ॥

७ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

अर्थः—१अंग गलित भया । २शिर ३श्वेतके-
शयुक्त भया । ४मुख ५दंतरहित भया । ६दृढ
हुया ७दंडकूं ८पकरिके ९चलता है । १०तीवी
११आशाके पिंडकूं १२छोडता नहीं । तर्ति
तूं अब ताके दाहअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ३ ॥

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं

पुनरपि जननीजठरे शयनम् ॥

इह संसारे खलु दुस्तारे

कृपयाउपारे पाहि मुरारे ॥ भज० ॥ ४ ॥

अर्थः—१इस २दुस्तर ३अपार ४संसारविषै
५फेर बी जन्म । फेर बी मरण । फेर बी माताके
उदरविषै शयन होवै है । तर्ति ६“हे मुरारे ।
तूं ७कृपा करी ८रक्षण कर” एसे प्रार्थना करिके
तूं गोविंदकूं भज ॥ ४ ॥

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

दिनमपि रजनी सायं प्रातः

शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ॥

कालः क्रीडति मञ्चत्पायु-

स्तदपि न मुंचयाशावायुः ॥ भज० ॥५॥

अर्थः—१ दिनरात्रि सायंप्रातः शिशिर अरु
वसंत बी फेर आवता है । काल खेलता है ।
२ आयु ३ जाता है । ४ तौ बी ५ आशारूप वायु
६ छोड़ता नहीं । तार्ते तूं दृढयत्नकरिके बी
गोविंदकूं भज ॥ ५ ॥

जेटिलो मुंडी लुंचितकेशः

कापायांबरबहुधृतवेषः ॥

पश्यन्नपि न च पश्यति लोकै

लंदरनिमित्तं बहुकृतशोकः ॥ भज० ॥६॥

अर्थः—१ जटाधारी । मुडित । लुंचित केशोंवा-
ला अरु कापायांबरकरि बहुतवेषनके धारनेवाला ।

९ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [विदांत

औ १ उदरनिमित्त बहुशोकका करनेवाला ३ लोक ।
पाप आदिककूं ४ देखता हुआ बी नहीं देखता
है । तार्ते तूं अट्टएके भरोसे अदंभी हुआ गो-
विंदकूं भज ॥ ६ ॥

वयसि गते कैः कामविकारः

शृण्वे नीरे कैः कासारः ॥

क्षीणे वित्ते कैः परिवारो

ज्ञाते तत्त्वे कैः संसारः ॥ भज० ॥ ७ ॥

अर्थः—जैसे १ वयके गये २ कामविकार ३ कौ-
न है ? ४ जलके ५ सूके हुये ६ ताल ७ कौन है ?
८ धनके ९ क्षीण भये १० परिवार ११ कौन है ? तैसे
१२ तत्त्वके १३ जाने हुये १४ संसार १५ कौन है ?
तार्ते तूं तत्त्वज्ञानअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ७ ॥

अग्रे वह्निः पृष्टे भान्

रात्रौ चिबुकसमर्पितजातुः ॥

विनोद ३]. चर्पटयंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ १०

करतलभिक्षा तरुतलवास-

स्तदपि नै मुंचत्योऽशापाशः ॥ भज० ॥ ८ ॥

अर्थः—१ आगे अग्नि है । पीछे सूर्य है । रात्रि-
में हनुमटीविषे धरे जाबुवाला है । करतलमें
भिक्षा है । तरुतलमें वास है । तीनों २ आशारूप
पास ३ छोड़ता नहीं । तर्हि तूं गोविंदकूं भज ॥ ८ ॥

यावद्विचोपार्जनसक्त-

स्तावन्निजपरिवारो रक्तः ॥

पश्चाज्जैर्जरभूते देहे^३

वार्ता कोऽपि नै पृच्छति मेहे ॥ भज० ॥ ९ ॥

अर्थः—१ नहांलगि धनसंपादनमें समर्थ होवे
तहांलगि स्वकुटुंब प्रीतिमान् होवे है । पीछे २ दे-
हेके ३ जीर्ण भये ४ गृहविषे ५ कोई ची ६ वात-
७ पूलता नहीं । तर्हि तूं कुटुंबासक्ति छोड़िके गो-
विंदकूं भज ॥ ९ ॥

११ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

रंध्याकर्पटविरचितकंथः

पुण्यापुण्यविवर्जितपंथाः ॥

नै त्वं नौहं नौयं लोक-

स्तदपि किमर्थं क्रियंते शोकेः ॥ भज० १०

अर्थः—१मार्गके जीर्णवस्त्रके खंडौकरि रची है कंथा जिसने । औ पुण्यपापकरि रहित है मार्ग जिसका । “औ २तूं ३नहीं । ४में ५नहीं । ६यह लोक ७नहीं है ।” (ऐसे जान्या है जिसने) ८तौ बी किसअर्थ ९शोक १०करिये है ? ततैं शोकरहित हुया तूं गोविंदकूं भज ॥ १० ॥

नारीस्तनभरजघननिवेशं

दृष्ट्वा मायामोहावेशम् ॥ :

ऐतन्मांसवसादिविकारं

मनसि विचारय चारंवारम् ॥ भज० ११

अर्थः—१माया औ मोहके आवेशवाले २ना-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तौत्रम् ॥ २ ॥ १२

रीके स्तनोंके भार अरु जघनरूप स्थानकूं देखि-
के .३इसकूं मांस अरु नाडीआदिकका विकार
मनविषै ध्वारंधार ९विचार कर । अरु गोविंदकूं
भज ॥ ११ ॥

मेयं^२ गीतानामसदृशं

द्वेयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ॥

नेयं^३ सज्जननिकटे चित्तं

देयं^४ दीनजनाय च वित्तम् ॥ भज० ॥ १२ ॥

अर्थ:—१गीता अरु नामोंका सहस्र २गावनै
योग्य है । ३श्रीपतिका रूप निरंतर ध्यावनै
योग्य है । ४सज्जननोंके समीपमें चित्त ६देनैकूं
योग्य है । ७औ ८दीनजनके वास्ते ९वित्त १०देनै
योग्य है । ऐसै करते हुये तूं गोविंदकूं भज ॥ १२ ॥

भगवद्गीता किंचिदधीता

गंगाजललवकणिका पीता ॥

१३ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

येनाकारि धुरारेरर्चा

तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम् ॥ भज० ॥ १३

अर्थः—१जिसने २भगवद्गीता कहलक पढ़ी है
औ गंगाजलकी लवकनिका पान करी है औ
३मुरारिकी पूजा ४करी है । ५ताकी ६चर्चाकूं
७यमराजा क्या करता है? किंतु नहीं करता है।
यातैं ऐसा हुआ तूं गोविंदकूं भज ॥ १३ ॥

कोडेहं केस्तेवं क्लृप्त आयातः

कां मे जननी को मे तातः ॥

'इति' परिभावय सर्वमसारं

'सर्वं' त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥ भज० १४

अर्थः—१मैं २कौन हूं? ३तूं ४कौन है? ५क-
हांतैं आया है? ६मेरी जननी ७कौन है? ८मेरा
तात ९कौन है? १०ऐसें ११स्वप्नतुल्य विचार-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ १४

वाढा हुआ १२सर्वकुं असार १३भावना कर ।
औ १४सर्वकुं त्यागिके गोविंदकुं भज ॥ १४ ॥

का ते' कांता कैस्ते' पुत्रः

संसारोऽयमतीव विचित्रः ॥

कैस्य ह्र्वं कैः कुत आयात-

स्तेरुवं चित्तैय मेनसि आतः ॥ भज० १५

अर्थः--१तेरी कांता ९कौन है । ३तेरा पुत्र
४कौन है । ५यह ६संसार ७अतिशयही विचित्र
है ॥ ८तुं ९कौनका है । १०कौन है । कहां-
से आया है । ११हे भाई । १२तत्त्वकुं १३मन-
यिने १४चित्तन कर । अरु गोविंदकुं भज ॥ १५ ॥

धुरतटिर्नीतरुपूलनिवासः

शैष्या भूतलमजिनं वासः ॥

सर्वपरिग्रहभोगस्यागः

कैस्य सुखं न करोति विरागः ॥

१५ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

भैज गोविंदं भैज 'गोविंदं

भैज 'गोविंदं मूढमते ॥ १६ ॥

अर्थ:—१ गंगाके तीरके तरुके मूलमें निवास है । २ भूतलरूप ३ शय्या है । ४ मृगचर्मरूप वस्त्र है । अरु सर्व परिग्रह औ भोगका त्याग है जिसविषे । ऐसा जो ५ विराग । सो ६ किसकुं सुख नहीं करै है ? किंतु सर्वकुं करै है । यातैं तूं विरक्त हुया । ७ हे मूढमते ! ८ गोविंदकुं ९ भज । १० गोविंदकुं ११ भज । १२ गोविंदकुं १३ भज ॥ १६ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकरा-
चार्यविरचितं चरपटपंजरिकास्तोत्रं
समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

॥ शिखरिणी छंदः ॥

विहायैः कृत्वा

ऋतुविधुरकर्मादि विहितं

रिप्यं संशोभ्याऽऽर्त्वा-

चिंदचिदबलोकादिनिकरम् ॥

सैमाराध्याऽऽचार्य

नेतिविमतिशुश्रूषणमुखैः

प्रेषः सन् पृच्छेद्

विविदिपितपात्मीयमखिलम् ॥ १ ॥

अर्थः—१ विहित (शुभ) अरु २ फलके संक-
ल्पसं रहित कर्म अरु उपासनाकृं ३ करीके ।
४ पाप (मलविशेष)कृं ५ त्यागीके । ६ बुद्धिकृं
शोधनकरिके ७ चिद् जडके विवेकआदिक सा-
धनोका समूह ८ प्राप्तकरिके ॥ फेर ९ नमस्कार

प्रश्न अरु सेवाआदिक उपायोंकरि १० आचार्य
 (गुरु) कूं ११ सम्यक् आराधन (प्रसन्न) करिके
 १२ शरणागत हुया १३ आपके १४ जाननेकूं वांछित
 १५ सकल अर्थकूं [अधिकारी] १६ पूछे ॥ १ ॥

विचार्याऽऽत्मानं स्वं

श्रुतिगदितसच्चित्सुखमयं

पेरं ब्रह्मास्मीति

श्रवणमननध्यानकरणैः ॥

अहं ब्रह्मास्मीति

दृढर्मवर्गतिं गम्य परमां

विवाधयेदं दृश्यं -

संकलमेलमज्ञानसहितम् ॥ २ ॥

अर्थः—१ गुरुके पास श्रुतिप्रतिपादित सच्चि-
 दानंदस्वरूप २ अपने ३ आत्माक ४ "मैं परब्रह्म
 हूँ" ऐसैं ५ विचारिके । फेर ६ श्रवण मनन अरु

विनोद ३] मुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

१८

निदिध्यासनरूप साधनोकरि “मैं ब्रह्म हूँ”
ऐसी ७सर्वोत्तम ८विद्याकुं ९दृढ जैसे होवै तैसें
१०पायके । ११अज्ञान सहित १२इस १३स-
कल १४दृश्यकुं १५अत्यंत १६बाधकरिके
[स्थित होवै] ॥ २ ॥

विदित्वैतं तत्त्वं

निःखिलनिगमांतैर्निगदितं

निर्हत्वाऽनैर्धै वै

सकलमपि जीवोत्सहितम् ॥

परानंदो भूत्वा

भवति शुं वि भव्यो भवतिभो

विधेयं कैर्त्तव्यं

विविविधमपि हेयं हृदि गतम् ३

अर्थः—१ऐसें २सकलवेदांतोंकरि प्रतिपादित

३तत्त्वकुं ४ज्ञानिके । ५कारणसहित इसकल



बी ७अनर्थकं ८अपरोक्षबाध करिके । ९परमा-
नंदरूप होयके १०भूमिविषै अष्टचंद्रमा जैसी
कांतिवाला (शांत) ११होवै है ॥ ऐसैं हुये
१२विधान करने योग्य १३हृदयगत २४विविध
प्रकारका बी १५कर्त्तव्य १६त्यागनेकूं योग्य
होवै है ॥ ३ ॥

मुंदो जीवन्मुक्ते-

यदि हृदि धनीषा स्वविदुष-
स्तदाऽऽर्त्तं हृत्ते-

निर्गमैर्भुर्वन् चेदुत्तिष्ठम् ॥

विनोश्यैव स्थौल्यं

मलिनतरसत्त्वस्य मनसः

सुसत्त्वाविर्भावान्

परमसुखसिद्धौ हि सुरमेव ॥ ४ ॥

अर्थः—१फेर जो २स्वस्वरूपके वेत्ता (ज्ञानी)

विनोद ३] मुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

२०

कूं जो ३ हृदयविपै ४ जीवन्मुक्तिके ५ विलक्षण-
आनंदकी ६ इच्छा होवै ७ तो । ८ निरंतर अह
९ दीर्घकाल १० ब्रह्माकारवृत्तिकी ११ आवृत्तिकूं
१२ करता हुआ १३ अत्यंत मलिन (रजतमसैं
तिरस्कृत) है सत्त्वगुण जिसका । ऐसैं मनके
१४ स्थूलभाव (रजतमकरि सत्त्वगुणके तिरस्का-
र) कूं [ब्रह्माभ्यासके बलसैं रजतमके तिर-
स्कारद्वारा] १५ विनाश करिके (ऐसैं मनोनाश-
कूं करिके) हैं । १६ शुद्धसत्त्वगुणके आविर्भा-
वतैं निरतिशयसुखके समुद्रविपे निरंतरहीं र-
मण करै ॥ ४ ॥

सुभूमिं प्राप्येमां

परमसुखदां पंचमसुखां

सुखं मुक्त्वा ब्रह्मं

दृढतरनिजारब्धमपि चै ॥

विलोप्येदं वि^१श्वं

जंगदगमयं हेतुसहितं

चिदानंदे शुद्धे

भजति च विदेहामृतमयम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इस (उक्तप्रकारकी) जीवन्मुक्ति-
के विलक्षणआनंदकी देनेहारी पंचमआदिक २श्रे-
ष्ठभूमिका (चित्तकी अवस्थाविशेष)कूं पायके-
३ब्रह्मके ४सुखकूं ५औ ६दृढतर (प्रयत्नसैं अ-
मेद) स्वप्नारब्धकूं बी ७भोगिके । ८हेतु (अ-
ज्ञानकी विशेषहेतुशक्ति) करि सहित ९इस (दृश्य-
मान) १०चराचररूप ११विश्वकूं १२शुद्ध १३चि-
दानंद ब्रह्मविषै १४विलय (नाश) करिके १५यह
ज्ञानी १६विदेहमोक्षकूं १७बी १८पावता है ॥५॥

॥ इति श्रीमत् बापुपूज्यपादशिष्य पीतांब-
राहविदुषा विरचितं सेटीकं मुक्ति-
पंचकं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

तपोयज्ञदानादिभिः शुद्धबुद्धि-

विरक्तो नृपादौ पदे तुच्छबुद्ध्या ॥

परित्यज्य सर्वं यदाप्नोति तत्त्वं

परं ब्रह्म नित्यं तेदेवाहमेप्सि ॥ १ ॥

अर्थः—१तप यज्ञ अरु दानादिककरि शुद्धबुद्धिवाला औ २राज्यआदिकपदविषे तुच्छबुद्धिकरिके ३विरक्त भया पुरुष । ४सर्वकूँ ५परित्यागकरिके ६जित ७तत्त्वकूँ ८पावता है । ९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२मैं हूँ ॥ १ ॥

देयालुं गुरुं ब्रह्मनिष्ठं मर्शातं

समाराध्य भक्त्या विचार्य स्वरूपम् ॥

येदोप्नोति तैत्त्वं निदिध्यास्य विद्वान्

परं ब्रह्म नित्यं तैदेवोहमस्मि ॥ २ ॥

अर्थः—१दयालु २ब्रह्मनिष्ठ अरु परमशान्त
३गुरुकुं ४भक्तिसौ ५सम्यक् आराधनकरिके ।
६स्वरूपकुं ७विचारिके (श्रवणमननकरिके) ।
फेर ८निदिध्यासनकरिके विद्वान् ज्ञया । ९जित
१०तत्त्वकुं ११पावता है । १२सोई १३नित्य
१४परब्रह्म १५मैं हूं ॥ २ ॥

येदानंदरूपं प्रकाशस्वरूपं

निरस्तप्रपञ्चं परिच्छेदशून्यम् ॥

अहं ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं

परं ब्रह्म नित्यं तैदेवोहमस्मि ॥ ३ ॥

अर्थः—१जो आनंदरूप प्रकाशस्वरूप निष्प्र-
पञ्च तीनपरिच्छेदतै रहित । “मैं ब्रह्म हूं” । इस

एकवृत्तिकरि गम्य अरु तुरीयरूप है । २सोई
३नित्य ४परब्रह्म ५मैं हूं ॥ ३ ॥

यैदज्ञानतो भाति विश्वं समस्तं
विनष्टं चै सद्यो यैदात्मप्रबोधे ॥

मनोवागतीतं विशुद्धं विमुक्तं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ४ ॥

अर्थः—१समस्त २विश्व ३जाके अज्ञानतै
भासता है । ४औ ५जाके स्वरूपके प्रबोध हुये
६सद्यः ७विनाशकू प्राप्त होवै है । ऐसा जो-
८मनवाणीका अविषय विशुद्ध औ विमुक्त है ।
९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२मैं हू ॥ ४ ॥

निषेधे कृते नैतिनेतीति वाक्यैः

समाधिस्थितानां यदाभाति पूर्णम् ॥

अवस्थात्रयातीतमद्वैतमेकं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ५ ॥

अर्थ:—१ “ नेतिनेति (कारण नहीं औ कार्य नहीं) ” ऐसैं वाक्यनकरि २निषेधके कियेहुये । ३समाधिविषै स्थित पुरुषनकुं ४पूर्ण तीनअव-
स्थार्तैं रहित अद्वैत औ एकरूप ५जो भासता है । ६सोई ७नित्य ८परब्रह्म ९मैं हूं ॥ ५ ॥

यदा नंदलेशैः समानंदि विश्वं

यदा भाति सत्त्वे तदा भाति सर्वम् ॥

यदा लोचने हेयमन्यत्समस्तं

‘परं ब्रह्म नित्यं’ तदेवाहमस्मि ॥ ६ ॥

अर्थ:—१जाके आनंदके लेशों(प्रतिविम्बों)-
करि २विश्व ३सम्यक् आनंदवान् होवै है ।
औ ४जिसके आभाति (प्रभा)के सद्भावके हुये
सो ५सर्व ६भासता है । औ ७जाके आलोचनके
हुये ८अन्य समस्त ९त्याज्य होवै है । १०सोई
११नित्य १२परब्रह्म १३मैं हूं ॥ ६ ॥

अनंतं विभुं सर्वयोनिं निरीहं
शिवं संगहीनं यदोङ्कारगम्यम् ॥

निराकारमत्युज्ज्वलं मृत्युहीनं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ७ ॥

अर्थः—१जो २अनंत । विभु (व्यापक) । सर्व-
योनि (सर्वका कारण) । निरीह (निष्क्रिय) ।
शिव (कल्याणरूप) । असंग । ३ ओंकारकरि गम्य ।
निराकार । अतिउज्ज्वल औ मृत्युरहित है । ४ सोई
५ नित्य ६ परब्रह्म ७ मैं हूं ॥ ७ ॥

यदानंदसिधौ निमग्नः पुमान्स्पर्श-
द्विधाविलासः समस्तप्रपञ्चः ॥

तदा न स्फुरत्यद्भुतं यन्निमित्तं
'परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ८ ॥

अर्थः—१जब २पुरुष ३आनंदसमुद्रविषै नि-
मग्न ४होवै है । ५तब ६अविद्याका कार्य सम-

स्तप्रपंच ७ स्फुरता नहीं । किंतु अद्रुतरूप जो
आनंदका निमित्त स्फुरता है । सोई ९ नित्य
१० परब्रह्म ११ मैं हूं ॥ ८ ॥

स्वरूपानुसंधानरूपां स्तुतिं यः

पठेदौदराद्भक्तिभावो मेनुप्यः ॥

शृणोतीह वा नित्यमुक्तचित्तो

भवेद्विष्णुरेव वेदप्रमाणात् ॥ ९ ॥

अर्थः—१ जो २ मनुष्य ३ भक्तिभाववाला हुआ
४ स्वरूपके अनुसंधानरूप इस स्तुतिकूं ५ आद-
रते ६ पठन करे । ७ वा ८ ईहां ९ नित्य उद्योगवान्
चित्तवाला हुआ १० सुनता है । सो ११ इहांहीं जी-
वत अवस्थाविषे वेदरूप प्रमाणते १२ विष्णुरूप
१३ होवैगा ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता श्रीमच्छंकरा-
चार्यविरचिता विज्ञाननौका समाप्ता ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतपुस्तकालय ॥

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी.—कराची.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

बहुतकरिके संस्कृत तथा भाषाके छपे हुये सर्व वेदांत-
विषयक ग्रंथ हमारे नदांसे मिल सकते हैं ॥ कोई भी ग्रंथ
लेनेकी इच्छावालेहूँ ग्रंथकी कीमत तथा डाक महसूल
जनाया जावेगा । उत्तरके लिये स्वल्कार्ड भेजना ॥

नीचे लिखे ग्रंथनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा
मात्र वेत्युपेयपत्रका डाककमीशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावलि तथा बड़ी अकारादि अनुक्रमणिकास-

हित तृतीयावृत्ति ३१

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागजकी ४१

श्रीसुंदरविलास । हानसमुद्र आदिक तृतीयावृत्ति २१-

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पृष्ठे औ कागजका.... .. १॥१

श्रीविचारचन्द्रोदय । तृतीयावृत्ति १॥१

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(दोहेही ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण....	०॥
श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण.	१
श्रीपंचदशी मूलमात्र....	०॥
श्रीईशाद्वयोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीमें.	४
श्रीबालबोध टीकासहित.	०॥
„उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृष्ठसहित.	१
श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे ६०४ पृष्ठ) ३			
श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा			०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
*ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०।- ॥
रखी है । औ कोड़ी ६ अंकाका मात्र ६० ०॥ पड़ेगा.

- *१ वेदांतपदावलि (श्रीविचारध्व- ५ अस्त्रामक्तके पद.
ब्रौदयका सार) ६ प्रस्ताविकश्लोक अर्थ-
*२ वेदांतपदार्थसंज्ञा. सहित.
३ सूफीओंके गजल. *७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-
४ देवाजीमक्तके पद. सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ ऊपरि लिखे क्रमसे
नहीं परंतु समयसंयोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ २ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत
भाषादीपिकासहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४४-सन् १८८८ ।

(प्रकटकर्ताने सर्वहृष स्वाधीन रहे हैं)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सबे सज्जन पावहु मोद १

पहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
स्माकृत सस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कट करते हैं । परतु
निष्ठाकी आरुढतामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुमद करते हैं । तार्ति परमशुद्ध-
णिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपोताबरजीनें दयाकरिके स्तो-
त्रनकी माया फरी है । औ सस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकू
षी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवे । ताते मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अर्थकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस चतुर्थअंशमें जितने स्तोत्र छपे
हैं । सो नीचे लिखे हैं —

श्रीआत्मपट्टकस्तोत्रम् ॥ ५ ॥

श्रीआत्मचित्तनम् ॥ ६ ॥

श्रीनिर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥

श्रीआत्मपंचकम् ॥ ८ ॥

औ अन्य स्तोत्र पी पंचमादिअर्थोंविषे छपे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ २ ॥

॥ अथ श्रीआत्मपट्टस्तोत्रम् ॥५॥

॥ भुजंगप्रयातं छेदः ॥

मैं तो बुद्ध अहंकार चित्तानि नाहं

नैं चैं श्रोत्रजिह्वे नैं चैं घ्राणनेत्रे ॥

नैं चैं व्योमभूमी नैं तेजो नैं वायु-

त्रिंदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—१मैं २मन बुद्धि अहंकार अह चित्त
नहीं हूं। ३औ श्रोत्र औ जिह्वा इनहीं हूं। ५अह
घ्राण अह नेत्र इनहीं हूं। ७औ आकाश अह भूमि

२ आत्मपट्टकस्तोत्रम् ॥ ५ ॥ [विदांत

८नहीं हूं। अरु ९तेज १०नहीं हूं। अरु ११वायु
१२नहीं हूं। किंतु १३चिदानंदरूप शिव में हूं।
शिव में हूं ॥ १ ॥

अहं प्राणवर्गो न पंचानिला मे*

न तोषं न मे^१ धातवो नैव^२ कोशाः ॥

नै^३ वोक्पाणिपादौ नै^४ चोपस्थपायू

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥२॥

अर्थः—१में २जल अरु ३प्राणवर्ग नहीं हूं। ४

मेरे ५पांच वायु ६नहीं हैं। ७मेरे धातु ८नहीं

हैं। औ ९कोश १०नहीं हैं। औ ११वाक् पाणि

अरु पाद १२नहीं हैं। १३औ उपस्थ अरु पायु

१४नहीं हैं। किंतु १५चिदानंदरूप शिव में हूं।

शिव में हूं ॥ २ ॥

नै मे^१ द्वेपरागौ नै मे^२ लोभमोदी

मदो नैव मे^३ नैव मात्सर्यभानम् ॥

नं धर्मो नं चार्यो नं कौमो नं मोक्ष-

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१मेरेकूं द्वेष अरु राग २नहीं हैं । अरु
३मेरेकूं लोभ अरु मोह ४नहीं हैं । औ ५मेरेकूं ई
मद नहीं है । औ ७मत्सरभावका मान ८नहीं है ।
९धर्म १०नहीं है । ११औ अर्थ १२नहीं है । १३
काम १४ नहीं है । १५मोक्ष १६नहीं है । किंतु
१७चिदानंदरूप शिव मैं हूं । शिव मैं हूं ॥ ३ ॥

नं पुण्यं नं पापं नं सौख्यं नं दुःखं

नं मंत्रो नं तीर्थं नं वेदो नं यज्ञाः ॥

अहं भोजनं नैव भोज्यं नं भोक्ता

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

अर्थः—१पुण्य २नहीं है । ३पाप ४नहीं है । ५
सुख ६नहीं है । ७दुःख ८नहीं है । ९मंत्र १०नहीं
है । ११तीर्थ १२नहीं है । १३वेद १४नहीं हैं । १५

यज्ञ १६ नहीं हैं । औ १७ मैं भोजन (भोग) नहीं हूँ । भोज्य अरु १८ भोक्ता १९ नहीं हूँ । किंतु २० चिदानंदरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥ ४ ॥

नं मे' मृत्युशंका नं मे' जातिभेदः-

पिता नैव मे' नैव माता नं जन्म ॥

नं बंधुने' मित्रं गुरुनेव' शिष्य-

धिर्दानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ५ ॥

अर्थः-१ मेरेकूं मृत्युकी शंका २ नहीं है । औ ३ मेरेकूं जातिका भेद ४ नहीं है । औ ५ मेरेकूं ६ पिता नहीं है । ७ माता ८ नहीं है । ९ जन्म १० नहीं है । ११ बंधु १२ नहीं है । १३ मित्र १४ नहीं है । १५ गुरु अरु १६ शिष्य १७ नहीं । किंतु १८ चिदानंदरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥ ५ ॥

अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो

विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणि ॥

सदा मे समत्वं न मुक्तिर्न वंध-

धिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥६॥

अर्थः—१ मैं निर्विकल्प निराकाररूप विमुहूँ ।

औ २ सर्वविकारने सर्वइन्द्रियनके प्रति इन्ध्यापिके
वर्तमान हूँ । ४ मेरेकुं ५ सदा ६ समता है । ७ मुक्ति
नहीं है । ८ वंध ९ नहीं है । किंतु ११ चिदानं-
दरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥ ६ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्य-
विरचितं आत्मपट्टकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ ५ ॥



॥ अथ श्रीआत्मचित्तनम् ॥ ६ ॥

॥ अहं ब्रह्मास्मीत्यनुभवं वदति शिष्यः ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

अहमेव परं ब्रह्म वासुदेवाख्यमव्ययम् ।

इति स्यान्निश्चयान्मुक्तो ब्रह्म एवांन्यथा भवेत् ?

अर्थः—“ मैं ब्रह्म हूँ ” इस अनुभवकू शिष्य

कहता हैः—१ “ वासुदेव नामवाला अव्यय

(घटने बधनेसे रहित) २ परब्रह्म ३ मैंही हूँ ” ।

४ इस ९ निश्चयते सुक्त ६ होवैगा ७ अन्यथा

८ ब्रह्मही ९ होवैगा ॥ १ ॥

अहमेव परं ब्रह्म नै चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।

इत्येवं समुपासीत ब्रह्मणो ब्रह्मणि स्थितः २

अर्थः—१ “ मैंही परब्रह्म हूँ २ औ मैं ब्रह्मते

पृथक् ३ नहीं हूँ ” । ४ इसप्रकारसे ९ ब्राह्मण

(ब्रह्म होनेकी इच्छावाला मुमुक्षु) जो है सो

विनोद ४] आत्मचितनम् ॥ ६ ॥

७

ब्रह्मविपै स्थितः ह्युया इसम्यक् उपासना करै ॥ १ ॥
अहमेव परं ब्रह्म निश्चितं चित्तं चित्तिताम् ।
चिद्रूपत्वादसंगत्वादबाध्यत्वात्प्रयत्नतः ॥ २ ॥

अर्थः—१ हे चित्त ! २ चिद्रूप होनेतैं औ
असंग होनेतैं औ ३ प्रयत्नकरि ४ अबाध्य
होनेतैं ५ “मैहीं परब्रह्म निश्चित हूं” ऐसे तुज
करि ६ चित्तन करनेकूं योग्य है ॥ ३ ॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं चैतन्यं च निरंतरम् ।
तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा कैथं वर्णाश्रमी भवेत् ४

अर्थः—१ सर्वउपाधिनतैं रहित चैतन्य औ
निरंतर (भेदरहित) तिस ब्रह्मकूं “मैं हूं” ऐसे
जानिके २ वर्णाश्रमी ३ कैसैं ४ होवै ! किसीप्र-
कारसैं बी होवै नही ॥ ४ ॥

अहं ब्रह्मास्मि यो वेदे स सर्वं भवति त्विदम् ।
नाभूत्या ईशते देवास्तस्यात्मेपां भवेद्धि सः ५

अर्थ:—१जो २“ मैं ब्रह्म हूँ ” ऐसे ३ जानता है । सो ४तौ यह ५सर्व - (सर्वात्मा) होवै है । ६ताकी ७अभूतिके अर्थ ८देव ९ नहीं १०समर्थ होवै हैं । जाते ११सो (ज्ञानी) १२इन (देवन)का १३आत्मा १४होवै है ॥५॥

अन्योसावहमन्योस्मितीुपास्ते योऽन्यदेवताम्
न स वेदे नरो ब्रह्म सं देवानां यथा पशुः ६

अर्थ:—१“ यह २अन्य है । ३मैं अन्य हूँ ” ऐसै ४जो अन्य (आपतें भिन्न) देवताकुं ५उपासता है । ६सो ७नर ब्रह्मकुं ८नहीं ९जानता है । १०सो ११जैसै (मनुष्यनका) पशु होवै तैसै १२देवनका (पशु) है ॥ ६ ॥

अहं देवो न चान्योऽस्मि ब्रह्मवाहं न शोकं भाक्
संछिदानंदरूपोऽहं निर्विकल्पस्वभाववान् ७

अर्थ:—१मैं देव हूँ । २अन्य ३नहीं हूँ ।

ब्रह्मही मैं हूँ । ५शोकका भजनेवाला ६ नहीं हूँ । किंतु ७सच्चिदानंदरूप ८निर्विकल्प-स्वभाववाला ९मैं हूँ ॥ ७ ॥

आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरन्ति ये^१ ।
न तेषां दुष्कृतं किंचिदुष्कृतोत्थानं चापदः^८

अर्थः—१जे पुरुष २आत्माकूँ निरंतर ब्रह्म-रूप निश्चय करिके विचरते हैं । ३तिनकूँ ४किंचित् ५दुष्कृत (पाप) ६नहीं होवै है । ७औ ८दुष्कृततैं उत्पन्न ९आपतियां १०नहीं होवै हैं ८ आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरेत्सुखम् ॥ संसारे गतसारे येस्तैस्त्र्यं दुःखं न जायते ॥९॥

अर्थः—१जो पुरुष २आत्माकूँ निरंतर ब्रह्मरूप निश्चयकरिके ३सुख जैसें होवै तैसें ४ विचरे । ५ताकूँ ६असार ७संसारविषे ८दुःख नहीं होवै है ॥ ९ ॥

क्षेणं ब्रह्माहमस्मीति येः कुर्यादौत्मचिन्म ।
सैर्महापातकं हन्यात्तमः सूर्योदयो यथा ॥ १०

अर्थः—१जो रक्षणमान “मैं ब्रह्म हूँ”
ऐसे २आत्माके चितनकू ३करै । ५सो ६
सूर्यका उदय जैसे ७अंधकारकू (हनन करै है)
तैसे ८महापातककू हनन करै है ॥ १० ॥

अज्ञानाद्ब्रह्मणो जातमोकाशं बुद्बुदोपमम् ।
आकाशाद्वायुरुत्पन्नो वायोस्तेजस्ततः पयः ।
अंभसः पृथिवी जाता ततो व्रीहियवादिकम् ११

अर्थः—१ब्रह्मके २अज्ञानतैं ३बुद्बुदकी उप-
मावाला ४आकाश ५उपज्या । ६आकाशतैं वायु
उपज्या । वायुतैं तेज । तिसतैं जल । जलसैं पृथ्वी
उपजी । तिसतैं व्रीहियवादि (अन्न) उपज्या ॥ ११ ॥
पृथिव्यप्सु पयो बन्हा बन्दिर्वायौ नभस्यसा ।
नभोऽप्यव्याकृते तच्च शुद्धे शुद्धोऽसंस्पृहं हरिः

अर्थः—१एव्ही जलविपै । जल अभि-
विपै । अग्नि वायुविपै । २यह (वायु) ३
आकाशविपै । ४आकाश बी अज्याकृत (अ-
ज्ञान)विपै । औ सो (अज्ञान) शुद्धविपै क-
ल्पित है । "सो शुद्ध १हरि ६में ७हूँ" ॥१२॥
अहं विष्णुरहं विष्णुरहं विष्णुरहं हरिः ।

कर्तृभोक्तादिकं सर्वं तद्विद्योत्थमेव चे १३

अर्थः—१मैं विष्णु हूँ । मैं विष्णु हूँ । मैं
विष्णु हूँ । मैं हरि हूँ २औ ३कर्त्ताभोक्ता-
दिकं सर्वं तिसकी अविद्यातैं उपजाही है ॥१३॥
अच्युतोऽहमनंतोऽहं गोविंदोऽहमेहं हरिः ।
आनंदोहमज्ञेपोहमजोहममृतोऽस्म्येहम् ॥१४॥

अर्थः—१अच्युत मैं हूँ । अनंत मैं हूँ । गोविंद
मैं हूँ । २हरि ३मैं हूँ । ४आनंदरूप मैं हूँ । अज्ञेय
मैं हूँ । अजन्मा मैं हूँ । अमृतरूप ५मैं हूँ ॥१४॥

नित्योहं निर्विकल्पोहं निराकारोहमव्ययः ।

सच्चिदानन्दसंदोहः पररूपोऽस्म्यहं सदा १५

अर्थः—१नित्य मैं हूं । निर्विकल्प मैं हूं ।
निराकार मैं हूं । अव्यय सत् चित् अह आनन्द-
का समूह परब्रह्मरूप २सदा ३मैं ४हूं ॥ १५ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी मुक्तोऽहमिति भावयेत् ।

अशक्तुर्वन्भावयितुं वाक्यमेतत्संदोह्यसेत् १६

अर्थः—१“मैं २ब्रह्मही हूं । ३संसारी
४नहीं । ५मैं ६मुक्त हूं” । ७ऐसी भावना
करै । ८भावना करनेकूं ९अशक्त हुआ १०इस .
११वाक्यका १२सदा अभ्यास करै ॥ १६ ॥

ध्यानयोगेनैकमासाद्ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।

पञ्चमासाभ्यासयोगेन सर्वं पापं व्यपोहति १७

अर्थः—१एक मासतैं २ध्यानयोग करि

३द्वयहत्याकृं दूरी करै है । पद्मासके अभ्या-
सयोगकरि सर्वपापकृं दूरी करै है ॥ १७ ॥

संवत्सरकृताभ्यासात्सिद्धयष्टकमवाप्नुयात् ।

यावज्जीवं सदाभ्यासाज्जीवन्मुक्तो न संशयः

अर्थः—संवत्सरपर्यंत किये अभ्यासतैं सिद्धिनके
अष्टककूं पावता है । औ जीवत्पर्यंत सदा अभ्यासतैं
जीवन्मुक्त होवै है । याँ संशय नहीं है ॥ १८ ॥

नाहं देहो न च प्राणो न त्रिधाणि तथैव च ।

मे मेनां ऽहं न बुद्धिश्चेनैव चित्तमहंकृतिः १९

अर्थः—१ मैं देह २ नहीं हूं । ३ औ प्राण
४ नहीं हूं ५ तैं ६ इंद्रियां ७ नहीं हूं । ८ औ ९ मैं
१० मन ११ नहीं हूं । १२ औ १३ बुद्धि १४ नहीं
हूं । औ १५ चित्त अरु अहंकार १६ नहीं हूं १७
नाहं पृथ्वी न सैलिलं न च वहिस्तथानिलः ।
न चाकाशो न शब्दश्च न च स्पर्शस्तथा रसः ॥

अर्थः—१मैं पृथ्वी २नहीं हूँ । ३जल ४नहीं हूँ । ५औँ अग्नि ६नहीं हूँ । ७तैसैं वायु ८औँ आकाश ९नहीं हूँ । १०औँ ११शब्द १२नहीं हूँ । १३औँ स्पर्श तैसै रस नहीं हूँ ॥ २० ॥

नोहं' गंधो नै रूपं चे न मायाहं न संसृतिः ।
सदा साक्षिस्वरूपत्वाच्छिव एवास्मि केवलम् ॥

अर्थः—१मैं गंध २नहीं हूँ । ३औँ ४रूप ५नहीं हूँ । ६मैं ७माया ८नहीं हूँ । ९संसृति १०नहीं हूँ । ११सदा साक्षी स्वरूप होनेतैं १२ केवल १३शिवहीं हूँ ॥ २१ ॥

अकर्ताहमभोक्ताहमसंगः परमेश्वरः ।

सदा सत्सन्निधानेन चेष्टते सर्वमिन्द्रियम् ॥ २२ ॥

अर्थः—१मैं २अकर्ता हूँ । ३अभोक्ता हूँ । ४मैं ५सदा ६असंग परमेश्वर हूँ । ६मेरे सन्निधानतैं ७सर्वइन्द्रिय ८चेष्टा करैहैं ॥ २२ ॥

आदिमध्यांतमुक्तोऽहं न वैद्धोहं कदाचन ।
स्वभावनिर्मलः शुद्धः स एवाहं न संशयः २३

अर्थः— १ मैं २ आदि मध्य अह अंतर्त २-
हित हूं । ३ मैं कदाचिन् शब्द १ नहीं हूं । जो ईश्वर-
भावर्त निर्मल अह शुद्ध है । सोई मैं हूं । यामि
७ संशय ८ नहीं है ॥ २३ ॥

सर्वज्ञोऽमनंतोऽहं सर्वज्ञः सर्वशक्तिमान् ।
आनंदः सत्यबोधोऽमिति ब्रह्मानुचितनम् २४

अर्थः— “ सर्वज्ञ मैं हूं । अनंत मैं हूं । सर्व-
गत सर्वशक्तिमान् आनंदरूप सत्यबोधरूप मैं
हूं ” । यह ब्रह्मका अनुचितन है ॥ २४ ॥

अत्र प्रपंचो मिथ्यैव सत्यं प्रेम्णादमोक्षयम् ।
अत्र प्रमाणं वेदांता गुरवोऽनुभवस्तथा २५

अर्थः— १ “ यह प्रपंच मिथ्याही है । सत्य
२ अद्वय ३ ब्रह्म मैं हूं ” । ४ यामि ५ वेदांत (उप-

निपट्) ६अरु ७गुरु तैसै अपना अनुभव प्रमाण है ॥ २५ ॥

मय्येव सकलं जातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
मयि सर्वं लयं याति तद्रूपद्वैयमस्म्यहम् २६
अर्थः— १मेरेविपैही सकल उपज्या है । मेरे-
विपै सर्व स्थित है । मेरेविपै सर्व लयकूं पावता
है । सो २अद्वय ३ब्रह्म ४मैं ५हूं ॥ २६ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।
नाहं देहो न मे देहः केवलोऽहं सनातनः
अर्थः— १मैं २ब्रह्मही हूं । ३संसारी (जीव)
४नहीं हूं । ५ओ मैं ब्रह्मतैं पृथक् ६नहीं हूं ।
७मैं देह ८नहीं हूं । ९मेरा देह १०नहीं है । ११
केवल १२सनातन १३मैं हूं ॥ २७ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमदात्मचि-
न्तनं समाप्तम् ॥ ६ ॥

विनोद ४]

॥ अथ निर्वाणदशकं (सिद्धांत-
विदुः) प्रारम्भः ॥ ७ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

न भूमिर्न तोयं न तेजो न वायु-

न खं न^१न्द्रियं न^२ तेषां समूहः ॥

अनेकांतिकत्वात्सुषुप्त्यैकसिद्ध-

स्तदे^३कोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ १

अर्थः— १भूमि २नहीं है । ३जल ४नहीं है । ५तेज ६नहीं है । ७वायु ८नहीं है । ९आकाश १०नहीं है । ११इन्द्रिय १२नहीं है । १३ वा १४तिनका समूह १५नहीं है । इनकुं १६ व्यभिचारी होनेते । १७तार्ते १८सुषुप्तिविपै सिद्ध १९एक अवशिष्ट २०केवल २१शिव २२में हूं ॥ १ ॥

नै वैर्णा नै वैर्णाश्रमाचारधर्मा

नै मे' धारणाध्यानयोगादयोपि ॥

अनात्माश्रयाहंममाध्यासहानात्

तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥२॥

अर्थः—१मेरेकू २वर्ण ३नहीं है । औ ४वर्ण
औ आश्रमके आचार अरु धर्म ५नहीं है । औ
६धारणा औ ध्यान योग आदि की ७नहीं है ।
८अनात्मारूप आश्रयवाले अहंममअध्यासकी
निवृत्तिर्ते ॥ तर्ते एक अवशिष्ट ९केवल १०
शिव ११में हू ॥ २ ॥

नै माता पिता वा न देवा न लोका

'न वेदा न यज्ञा नै 'तीर्थ 'युवन्ति ॥

सुषुप्ता निरस्तातिशून्यात्मकत्वात्

तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१माता २वा ३पिता ४नहीं है । ५

पिनोद ४] निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ १९

देव ६ नहीं है । ७ लोक ८ नहीं है । ९ वेद १०
नहीं है । ११ यज्ञ १२ नहीं है । १३ तीर्थ १४ नहीं
है । १५ कहते हैं कि सुषुप्तिविषै निरस्त अतिशू-
न्यरूप होनेतें ॥ तार्ते एक अवशिष्ट १६ केवल
१७ शिवरूप १८ मैं हूं ॥ ३ ॥

ने सांख्यं ने शैवं ने तैत्तिरीयं चराग्रम्
ने 'जैन' ने 'मीमांसकादेर्मतं वां ॥

^{१३}विशिष्टानुभूत्या विशुद्धात्मकत्वात्
तदेकोवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१ सो २ सांख्य ३ नहीं है । ४ शैव ५
नहीं है । ६ पांचरात्र ७ नहीं है । ८ जैन ९ नहीं
है । १० वा ११ मीमांसक आदिकका मत १२
नहीं है । १३ येष्ट अनुभव करि विशुद्धस्वरूप हो-
नेतें ॥ तार्ते एक अवशिष्ट १४ केवल १५ शिवरूप,
१६ मैं हूं ॥ ४ ॥

२० निर्वाणदशकम् ॥७॥ [वेदांत

ने चोर्ध्वं नै चाधो नै चार्तर्न वाद्यम्
 नै मेध्यं नै ति र्भङ् नै पूर्वापरादिक् ॥
 विषेद्व्यापकत्वादखंडैकरूप-

स्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ५ ॥

अर्थः-१ उर्ध्व २ नहीं है । ३ औ अध ४ नहीं
 है । ५ औ भीतर ६ नहीं है । ७ वाद्य ८ नहीं है ।
 ९ मध्य १० नहीं है । ११ टेदा १२ नहीं है । १३ पूर्व
 अरु पश्चिम दिशा १४ नहीं है । १५ आकाशकी
 न्याई व्यापक होनेतैं । अखंड एकरूप है । तानै
 एक अवशिष्ट १६ केवल १७ शिवरूप १८ मैं हूं ॥५॥

नै शुक्लं नै कृष्णं नै रक्तं नै पीतं

नै कुञ्जं नै धीनं नै ह्रस्वं नै दीर्घम्

अरूपं तेषा ज्योतिराकारकत्वात्

तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ६ ॥

अर्थः-१ शुक्ल २ नहीं है । ३ कृष्ण ४ नहीं है ।

५रक्त ६नहीं हूं । ७पीत ८नहीं हूं । ९कुब्ज
(कूबडा) १०नहीं हूं । ११पीन १२नहीं हूं ।
१३ह्रस्व १४नहीं हूं । १५दीर्घ १६नहीं हूं ।
१७तथा १८अरूप हूं । १९ज्योति (प्रकाश)
रूप आकारवाला होनेतैं ॥ तारैं एक अवशिष्ट २०
केवलं २१शिवरूप २२मैं हूं ॥ ६ ॥

नं शास्ता नं शास्त्रं नं शिष्यो नं शिक्षा ।
- नं च त्वं नं चाहं नं चोयं प्रपंचः ॥

। स्वरूपावबोधो विकल्पासहिष्णु-

। स्तटेकोऽवशिष्टः शिबः केवलोऽहम् ॥७॥

अर्थः— १शास्ता २नहीं है । ३शास्त्र ४नहीं
है । ५शिष्य ६नहीं है । ७शिक्षा ८नहीं है । ९
औ तूं १०नहीं है । ११औ मैं १२नहीं हूं ।
१३औ यह प्रपंच १४नहीं है । जातैं १५स्वरूप-
भूत अवबोध विकल्पकूं नहीं सहासनेहारा

२२ निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ [वेदांत

हूं । तार्ते एक अवशिष्ट १६केवल १७ शिवरूप
१८में हूं ॥ ७ ॥

नै जोग्रन्धं मे' स्वप्न को वा सुषुप्ति-

०न विंशो नै' वा तैजसः प्राज्ञको वा ॥

अविद्यात्मकत्वाभ्याणां तुरीय-

स्तंदेकोवशिष्टः शिवः केवलोऽहं ॥ ८ ॥

अर्थ:- १मेरेकूं २जागृत ३नहीं है । ४स्वप्न
वा सुषुप्ति ५नहीं है । ६विश्व ७नहीं हूं । ८वा
तैजस ९वा १०प्राज्ञ ११नहीं हूं । १२तीनोंकूं
१३अविद्यास्वरूप होनेते । १४तार्ते १५ तुरी-
यरूप १६एक अवशिष्ट १७केवल १८शिवरूप
१९में हूं ॥ ८ ॥

अपि व्यापकत्वाद्वितस्वप्रयोगात्

स्वतः सिद्धभावादनन्याश्रयत्वान् ॥

जैगत्तुच्छमेतत्समस्तं तदन्यत्र

तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ९ ॥

अर्थः— १ व्यापक होनेतैं । औ प्रसिद्ध तत्त्व
शब्दकरि उच्चारणतैं । औ स्वतःसिद्ध सत्ता
(होनेवाला) होनेतैं । औ अन्य आश्रयकरि र-
हित होनेतैं २मी । इतिसतैं अन्य ४ग्रह समस्त
१जगत् तुच्छ है । इततैं एक अवशिष्ट ७केवल
रश्मिरूप ९मैं हूं ॥ ९ ॥

नै चैकं तदन्यद्वितीयं कुतः स्यात्

नै वा केवलत्वं नै चाकेवलत्वम् ॥

नै शून्यं नै चाशून्यमद्वैतकत्वात्

कथं सर्ववेदान्तसिद्धं प्रेक्षीमि ॥ १० ॥

अर्थः— १जय एक २नहीं हैं । इतव तिसतैं
अन्ना द्वितीय कहतैं होवैगा । ४वा केवलभाव

९ नहीं है । ६ औ अकेवलभाव, ७ नहीं है । ८ शून्य ९ नहीं है । १० औ अशून्य ११ नहीं है । १२ अद्वैतरूप होनेमें । तब ताकू १३ सर्ववेदात्तों करि १४ कैसै १५ कहों ॥ १० ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं निर्वाणदशकं (सिद्धांत-विदुः) समाप्तम् ॥ ७ ॥

॥ अथ आत्मपंचकप्रारम्भः ॥ ८ ॥

॥ शालिनी छंदः ॥

नोहं देहो नेंद्रियाण्यंतैरंगम्

नैहंकारः प्राणवर्गो न बुद्धिः ॥

देवापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः

साक्षी नित्यः मत्तगात्मा शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—(मैं) देह २ नहीं हूँ । २ इंद्रिया ४ नहीं हूँ । ५ अंतरंग (मन) भी ६ अहंकार अह प्राण-वर्ग ७ नहीं हूँ । ओ ८ बुद्धि ९ नहीं हूँ । किंतु स्त्री पुत्र क्षेत्र धन आदिकर्तें दूर । साक्षी नित्य मत्त-गात्मा शिवरूप मैं हूँ ॥ १ ॥

रैज्ज्वज्ञानाद्भ्राति रैज्जुर्यथाहिः

ईवात्माज्ञानादात्मनो जीवमावः ॥

आप्तोक्त्या हि भ्रांतिनाशे स रज्जु—

जीवो नाहं दे'शिकोक्त्या शिवोहम् ॥२॥

अर्थ:—१जैसे २रज्जुके अज्ञानमें ३रज्जु ४
सर्परूप ५भासती है । तैसे ६स्वात्माके अज्ञानमें
आत्माकू जीवभाव है । जैसे आप्तवचनकरिही
भ्रांतिके नाश हुये सो (सर्प) रज्जु होवै है । तैसे
७गुरुके वचनकरि ८में ९जीव नहीं । किंतु
१०में ११शिव हूं ॥ २ ॥

आभाती दे' विश्वमात्मन्यसत्यं

सैत्यज्ञानानंदरूपे विमोहात् ॥

निद्रामोहात् स्वप्नवत्तन्ने सत्यं

शुद्धः पूर्णो नित्य एकः शिवोहम् ॥३॥

अर्थ:— १असत्य २यह विश्व । ३सत्य ज्ञान
आनंदरूप ४आत्माविषे ५विमोह (भ्रांति) में
६भासता है । ७निद्रारूप मोहमें स्वप्नकी न्याई सो

विनोद ४] आत्मपंचकम् ॥ ८ ॥

सत्य ९ नहीं है ॥ १० शुद्ध पूर्ण नित्य एक शिव-
रूप में हूँ ॥ ३ ॥

नाहं जातो न प्रेत्यो न नष्टो
देहस्योक्ताः प्रकृताः सर्वधर्माः ॥

कर्तृत्वादिश्चिन्मयस्याऽस्ति मोह-
कारस्यैव सात्मनो मे शिवोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१ मैं जन्मकूँ पाया २ नहीं हूँ । ३ वृद्ध
भया ४ नहीं हूँ । ५ नष्ट भया ६ नहीं हूँ । ७ प्राकृत
सर्वधर्म सदेहके कहे हैं । ८ कर्त्ताभाव आदि
चिन्मय १० आत्मरूप मेरेकूँ ११ नहीं १२ है ।
किंतु १३ अहंकारकूँ ही हैं । १४ मैं १५ शिवरूप
हूँ ॥ ४ ॥

मेतो नान्यत्किंचिदत्रास्ति दृश्यं
सर्वं वाद्यं वस्तुमौपोपकूंसम् ॥

आदर्शातिर्भासमानस्य तुल्यं

मय्यैतैते भौति तस्माच्छिवोऽहम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इहां २कुछ बी ३दृश्य ४मुजर्ते ५
अन्य इनहीं ७है । ८आदर्शके भीतर भासमा-
नके तुल्य ९सर्व बाह्य वस्तु १०अद्वैतरूप ११
मुजविपै १२माया करि कल्पित १३भासता है।
तार्ति १४मैं १५शिव हूं ॥ ५ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितमात्मपंचकं
समाप्तम् ॥ ८ ॥



श्रीईशाचष्टोपनिषद् । मूल औ धीशकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीय. ... ४

श्रीबालयोग टीकासहित. ... ०॥=

॥ उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पंठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगेह०४ धे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक भक्की कीमत ०)-॥
रखी है । श्री कोइबी ६ अंरुका मात्र रु. ०॥ पटंगा ॥

* १. वेदांतपदावलि (श्रीविचारच. ५ अष्टाभक्तके पद-

द्वोदशका सार)

६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

* २ वेदांतपदार्थसंज्ञा.

सहित.

३ मूकीभांके गजल.

* ७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-

४ देवाजी भक्तके पद.

सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे ग्रंथमें
नहीं परंतु समयसंयोग अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमस्क ॥ ९ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ ३ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितावरजीकृत

भाषादीपिका सहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ खत १९४४-सन् १८८८ ॥

(प्रकटकृताने सर्वहृष स्वाधीन रहे हैं)

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीमें. ... ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ... ०॥२

„ उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृष्ठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगेह०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०१

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०)॥
रखी है । औ कोड़ी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

*१. वेदांतपदावलि (श्रीविद्यारच. ५ अक्षाभक्तके पद-

बोधका सार)

६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

*२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.

सहित.

*३ सुफीओंके गजल.

* ७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-

*४ देवाजी भक्तके पद.

सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे प्रमर्से
नही परंतु समयमंजोग अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमअंक ॥ ५ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ अथ श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९॥

॥ श्रीशंकरउवाच ॥

॥ उपेंद्रवत्पा छंदः ॥

कैस्त्वं शिशो कैस्य कुतोऽसि गता ।

किं नाम ते^० त्वं कुत आगतोऽसि ॥

एतन्मयोक्तं वंदे चोर्मिकलं

मत्प्रीतये प्रीतिविवर्धनोऽसि ॥ १ ॥

अर्थः—श्रीशंकर उवाचः—१हे बालक ! २तू
३कौन है । ४किसका है । कहाँतैं ५जानेवाला
६है । ७तेरा क्या नाम है । ८तू कहाँतैं आया

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्व सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कंठ करते हैं । परंतु
निष्ठाकी आसक्ततामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुमन करते हैं । तानें परमकारु-
णिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपोतापरजीनें दयाकरिके स्तो-
त्रनकी भाषा करी है । औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकू
षी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवे । ताते मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस पंचमअंकमें जितने स्तोन छपे
हैं । सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥

श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥ १० ॥

श्रीस्वानुमवादशीस्तोत्रम् ॥ ११ ॥

औ अन्य स्तोत्र वा पद्यअर्थविधि छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

निर्मितं मेनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।

निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ॥

रैविलोकैचेष्टानिमित्तं यथा यैः ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसे २लोकनकी चेष्टाका निमित्त
३सूर्य है । तैसे ४जो ५मन अरु चक्षु आदिक-
की प्रवृत्तिविषे ६निमित्त है । औ ७निरस्त सर्व
उपाधियाला अरु आकाशके तुल्य है । ८सो
नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ३ ॥

यं मेद्रुष्णवन्नित्यवोपस्वरूपं ।

मेनश्चक्षुरादीन्निबोधात्मकानि ॥

प्रवर्त्तत आश्रित्य निष्कंपमेकं ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अग्निके उष्णकी न्याई नित्य बोध-
स्वरूप २निश्चल एकरूप ३जितको ४आश्रित

हैं। १०हे बाल ! तू ११इस मेरेकरि उक्तअर्थकूं
 १२औ (अनुक्तअर्थकूं बी) १३मेरी प्रीतिके
 वास्ते १४कथन कर। १५तूं प्रीतिवर्धक है ॥१॥

॥ हस्तामलकउवाच ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

नाहं मनुष्यो न च देवयक्षौ ।

न ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः ॥

न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो ।

भिक्षुर्न चाहं निजबोधरूपः ॥ २ ॥

अर्थः—हस्तामलक उवाचः—१मैं मनुष्य २न-
 हां हूं। ३औ देव अरु यक्ष ४नहीं हूं। औ
 ५ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अरु शूद्र ६नहीं हूं। ७ब्र-
 ह्मचारी ८नहीं हूं। ९गृहस्थ औ वानप्रस्थ १०नहीं
 हूं। ११औ १२भिक्षु (सन्यासी) नहीं हूं। किंतु
 १३निजबोधरूप १४मैं हूं ॥ २ ॥

निमित्तं मनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।

निरस्तासिलोपाधिराकाशकल्पः ॥

रेविलोकितेष्टानिमित्तं यथा यैः ।

स निसोपलब्धिस्वरूपोद्दमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसे २लोकनकी चेष्टाका निमित्त ३सूर्य है । तैसे ४जो ५मन अरु चक्षु आदिक-
की प्रवृत्तिविषे ६निमित्त है । औ ७निरस्त सर्व
उपाधियाला अरु आकाशके तुल्य है । ८सो
नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ३ ॥

यं मन्त्र्युष्णवन्नित्यबोधस्वरूपं ।

मनश्चक्षुरादीन्धैवोधात्मकानि ॥

प्रवर्तत आश्रित्य निष्कंपमेकं ।

स निसोपलब्धिस्वरूपोद्दमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अग्निके उष्णकी न्याई नित्य बोध-
स्वरूप २निश्चल एकरूप ३जिसको ४आश्रय

करिके ५अबोध (जड) स्वरूप ६मन अरु चक्षु
आदिक ७प्रवर्त्त होवै हैं । ८सो नित्य ज्ञान-
स्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ४ ॥

मैनश्चक्षुरादेर्वियुक्तः स्वयं यो ।

मैनश्चक्षुरादेर्मनश्चक्षुरादिः ।

मनश्चक्षुरादेरगम्यस्वरूपः ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोहंमोत्मा ॥५॥

अर्थः—१जो २थाप ३मन अरु चक्षु आदिकर्त
न्यारा है। औ ४मन अरु चक्षु आदिकका मन अरु च-
क्षुरूपादिक है। औ मन अरु चक्षु आदिकर्त अगम्य
स्वरूपवाला है। सो नित्य ज्ञानरूप ५आत्मा ६मैं हूं ५
मुझाभासको दर्पणे दृश्यमानो ।

मुझत्वात्पृथक्त्वेन नैवास्ति वस्तु ॥

चिदाभासको धीपुं जीवोपि तद्वत् ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोहंमोत्मा ॥ ६ ॥

अर्थः—जैसे १दर्पणविषै दृश्यमान जो २मुखका आभास । सो ३मुखरूप होनेतें एयक्पनेकरि ४वस्तु ५नहीं है । ६तैसे ७बुद्धिविषै ८चिदाभासरूप ९जीव बी है । १०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२में हूं ॥ ६ ॥

येथा दर्पणाभाव आभासहानौ ।

मुखं विद्यते कैल्पनाहीनमेकम् ॥

तथा धीवियोगे निर्भासको यैः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोहेमात्मा ॥ ७ ॥

अर्थः—१जैसे दर्पणके अभावके भये मुखके आभासकी हानिके हुये २कल्पनाहीन एक ३मुख विद्यमान होवै है । ४तैसे बुद्धि उपाधिके वियोग भये ५जो ६आभासरहित होवै है । ७सो नित्यज्ञानस्वरूप ८आत्मा ९में हूं ॥ ७ ॥

य एको विभोति स्वतः शुद्धचेताः ।

प्रकाशस्वरूपोऽपि नानेव धीर्गु ॥

६ हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ [विदांत

शरोबोदकस्यो र्थथार्थानुरेकः

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोर्हमात्मा ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो एक २स्वतः शुद्धचेतन प्रकाश-
स्वरूप हुआ ३बुद्धिनविषे ४नानाकी न्याई ५भा-
सता है । ६जैसे ७एक ८मानु ९शरावके जल-
विषे स्थित हुआ [नानाकी न्याई भासता है ।] तैसे
१०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूँ ॥ ८ ॥

यथा सूर्य एकोऽप्यनेकश्चलासु ।

स्थिरास्वप्सनन्वग्विभाव्यस्वरूपः ॥

चलासु प्रभिन्नासु धीर्देवैक एव ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोर्हमात्मा ॥ ९ ॥

अर्थः—१जैसे २एक वी ३सूर्य । ४चंचल
अथ स्थिररूप नानाजलविषे अनुगतप्रकाशकरि
भासमान स्वरूपवाला हुआ ५अनेकरूप हो-
वै है । ६ऐसे ७एक हुआ । ८चंचल भिन्न भि-
न्न बुद्धिनविषे जो अनेकरूप होवै है । ९सो

विनोद ९] हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥

७.

नित्य ज्ञानस्वरूप १० आत्मा ११ मैं हूँ ॥ ९ ॥

यैथानेकचक्षुः प्रकाशो रविर्न ।

क्रमेण प्रकाशीकरोति प्रकाश्यम् ।

अनेका धियो यैस्तैर्यैर्कमबोधः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहं भातमा ॥ १० ॥

अर्थः—१जैसे अनेकचक्षुनका प्रकाशक सूर्य है । सो २प्रकाशने योग्य वस्तुकुं ३क्रमसै ४नहीं ५प्रकाश करै है । ६तैसे ७जो ८एक प्रबोध ९अनेकबुद्धिनक प्रकाश करै है । १०सो नित्यज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूँ ॥ १० ॥

विवस्वत्प्रभातं यथा रूपमक्षम् ।

प्रगृह्णाति नाभातमेवं विवस्थान् ॥

यदाभातमभासयत्यक्षमेकः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहं भातमा ॥ ११ ॥

अर्थः—१जैसे २सूर्यकरि प्रकाशित ३रूपक चक्षु ग्रहण करै है । ४अप्रकाशितक ५नहीं ।

८ हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ [वेदांत

६ ऐसै ७ एक सूर्य जो है सो ८ जिसकरि प्रकाशित
९ चक्षुह् १० प्रकाशता है । ११ सो नित्य ज्ञान-
स्वरूप १२ आत्मा १३ मैं हूं ॥ ११ ॥

समस्तेषु वस्तुष्वनुस्यूतमेकं ।

समस्तानि वस्तूनि यन्न स्पृशति ॥

वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपं ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपो हमात्मा ॥ १२ ॥

अर्थः—समस्तवस्तुनविषै अनुस्यूत एक है ।

औ समस्तवस्तु जिसकूं स्पर्श करते नहीं । औ

आकाशकी न्याई शुद्ध स्वच्छ स्वरूपवाला है ।

सो नित्य ज्ञानस्वरूप आत्मा मैं हूं ॥ १२ ॥

यन्नच्छन्नदृष्टिर्वन्नच्छन्नमर्कः ।

यथा धन्यते निष्पन्नं चातिमूढः ॥

तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः

सं नित्योपलब्धिस्वरूपो हमात्मा ॥ १३ ॥

अर्थः—१ जैसै २ बादलकरि आच्छादितदृष्टि-

विनोद ९] हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ ९

वाला ३ अतिमूढ (बालक) ४ भेषकरि आच्छादित
सूर्यकूं ५ निस्तेज ६ मानता है । ७ तैसै ८ जो मूढ-
पिवाले पुरुषकूं ९ बद्धकी न्याई भासता है ।
१० सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११ आत्मा १२ मैं हूं १३

उपाधौ यथा भेदता सन्मणीनां ।
तथा भेदता बुद्धिभेदेषु तेऽपि ॥

येथा चंद्रिकाणां जले चंचलत्वम् ।

तथा "चंचलत्वं तेषापीह विष्णो ॥ १४ ॥

अर्थः—(आचार्यवाक्य) १ जैसै श्रेष्ठ २ मणीनकी
३ उपाधिके होते ४ भेदता होवै है । ५ तैसै ६ तेरी बी
७ बुद्धिके भेदोंविषै ८ भेदता होवै है । ९ जैसै चंद्र-
माकी कां तिनकी जलविषै चंचलता है । तैसै १० हे
विष्णो (पूर्ण) ! ११ तेरी बी [इहां बुद्धिविषै]
१२ चंचलता है १४

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीहस्तामलका-
चार्यकृतं स्तोत्रं समाप्तम् ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥ १० ॥

॥ उपेंद्रवज्रा छंदः ॥

मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः ।

सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च ॥

ज्ञानप्रवाहा विमलादिगंगा ।

सा कैशिकाहं निजबोधरूपा ॥ १ ॥

अर्थः—जहां १मनकी निवृत्तिरूप जो परम-
उपशान्ति । सो तीर्थनविषे श्रेष्ठ मणिकर्णिका है ।

औ ज्ञानरूप प्रवाहवाली विमलभादि गंगा है ।

सो २निजबोधरूप ३काशी मैं हूं ॥ १ ॥

येस्यामिदं कल्पितमिद्रजालं ।

चैराचरं भाति मनोविलासम् ॥

संचित्मुर्खका परमात्मरूपा ।

सा कैशिकाहं निजबोधरूपा ॥ २ ॥

अर्थः—१ जिसविषे यह कल्पित इदंजालरूप
२ मनका विलास ३ चराचर भासता है । औ जो
४ सच्चिदानन्द एक परमात्मारूप है । सो ५ निज
बोधरूप ईकाशी में हू ॥ २ ॥

कोशेषु पञ्चस्वैधिराजमाना ।

बुद्धिर्भवानी श्रुतिदेहगेहम् ॥

सांख्यी शिवः सर्वगतोऽतरात्मा ।

सा काशिकाहं निजबोधरूपा ॥ ३ ॥

अर्थः—जो १ पञ्च २ कोशेषु ३ विराजमान
है । औ जहा ४ देहदेहरूप गृहके प्रति ५ बुद्धि-
रूप भवानी है । औ ६ सर्वगत अतरात्मा
७ सांख्यीरूप शिव है । ८ सो ९ निजबोधरूप
१० काशी में हू ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

कौश्यां हि कौशते कौशी ।

कौशी सर्वप्रकाशिका

सां काशी विदिता येन

तेन प्रोक्ता हि कांशिका ॥ ४ ॥

अर्थः—१प्रसिद्ध २काशीविपै ३चेतनरूप का-
शी ४प्रकाश करै है । औ जो चेतनरूप ५काशी
सर्वकी प्रकाशक है । ६जिसने ७सो काशी जानी
है । ८जिसने ९काशी १०प्राप्त करी है ॥ ४ ॥

॥ स्रग्धरा छंदः ॥

कांशीक्षेत्रं शरीर त्रिभुवनजठरे

व्यापिनी ज्ञानगंगा ।

भक्तिः श्रद्धा गयेयं निर्जगुरुचरण-

ध्यानयोगः प्रयागः ॥

विश्वेशोऽयं तुरीयः संकलजनमनः

साक्षिभूतोऽतरात्मा ।

१ 'देहे सर्वं मेदीये 'यंदि बसति पुन-

'स्तीर्थिष्यन्त्यर्त्किमस्ति ॥ ५ ॥

अर्थः—१सरीररूप २काशीक्षेत्रं है । औ
३त्रिभुवनके जठरविषे व्यापनेवाली ज्ञानरूप गंगा
है । औ ४ यह ५भक्ति अह यद्धारूप गया
है । औ ६निज गुरुके चरणोंका ध्यानयोग
प्रयाग है । औ ७सर्वजनोंके मनका साक्षिभूत
अंतर आत्मा ८यह तुरीयरूप ९विश्वेश्वर है ॥
१०जब ११मेरे १२देहविषे सर्व १३वसता है ।
तब फेर १४अन्य १५तीर्थ १६क्या है ॥ ५ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीकाशी-

पंचकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ १० ॥

॥ अथ श्रीस्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ११

प्रथम सर्वअविकारीनकूं साधारण ससाधन
सफलज्ञानके उपदेशपूर्वक स्वरूपानुसंधान करते
हुये स्वानुभवकूं दिखावे है:—

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

कर्मोपास्तिविशुद्धशांतहृदयो

नाडैऽप्ता विवेकादिकं ।

गत्वा ब्रह्मत्तिदं यशांतममलं

वेदार्थविज्ञं गुरुम् ॥

संशोध्य श्रवणं विधाय चै

मुहुमत्वा निदिध्यासवान् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिचपुषं

'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ १. ॥

अर्थ:—१कर्म अरु उपासना करिके, विशुद्ध
अरु शांत (एकाग्र) मया है हृदय जिसका । ऐसा

विनोद ५] स्वानुभवार्थस्तोत्रम् ॥११॥ १५

जो मनुष्य । सो २विवेक आदिक [साधन] हूँ
 ३पायके । ४ब्रह्मवेत्ता ज्ञात निर्मल (अनंदित
 आचारवाले) वेदार्थके जाननेवाले गुरुके
 प्रति [विधिपूर्वक] ५शरण जायके । [ताके पास]
 तत्त्वकूँ ६शोधन करिके । ७औ [अंगअंगी भेदतै
 द्विविध] ८श्रवणकूँ करिके । औ ९बारंबार मनन-
 करिके निदिध्यासनवान् हुआ पुरुष १०जाकूँ
 ११जानिके १२मुक्तिस्वरूप १३परब्रह्मकूँ पा-
 वता है । १४सो १५परमात्मा आप १६मैं हूँ ॥१॥

अब उत्तमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके
 प्रकारपूर्वक बोधके मार्गकूँ कहै हैं:-

‘नेतीत्यादिजगच्चिषेधनपरै-

वेदांतवाक्यैः परै-

युक्तेषु चैवेतिपिद्ध्व हृतेर्मखिलं

चाव्याकृतं व्याकृतम् ॥

ध्यात्वा^१काशसु^{१३}पुष्पसन्निभमिदं

शेषं^६ च^{१३} तत्त्वं निजं ।

ज्ञात्वा^{१४} यं परमेति^{१३} मुक्तिवपुषं

सोऽहं^{२३ २४ २४} परात्मा स्वयम् ॥ २ ॥

अर्थः— १ “नेति नेति” इत्यादिक जगत्के निषेध करनेके परायण २श्रेष्ठ ३उपनिषद्नके वाक्यनकरि ४औ ५युक्तिकरि । ६अव्याकृत (कारण)रूप ७औ ८व्याकृत (कार्य)रूप ९संपूर्ण १०द्वैतकूं ११निषेधकरिके (प्रथम प-रोक्षवाध करिके) । १२औ [तिसविषै एकाग्रताके अर्थ] १३इस (प्रपंच)कूं १४आकाशके पु-ष्पतुल्य (तुच्छरूप) १५चितन करिके । १६शे-परूप १७जिस १८निज १९तत्त्वकूं २०जानिके २१मुक्तिस्वरूप २२परब्रह्मकूं पावता है । २३सो २४परमात्मा आप २५मैं हूं ॥ २ ॥

अब मध्यमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके मार्ग कहै है -

देहान्तर्गतपञ्चकोशजगतः

कृत्वा पृथग्बुद्धिमान् ।

संगत्या सुविभागहानविधया

तत्त्वपदार्थो पैरी ॥

स्मृत्वाऽंसीतिपेदन चैवेयमनयोः

संबन्धसिद्धं हेदा ।

ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ३ ॥

अर्थ:- १बुद्धिमान् पुरुष । २सुसुप्रकारसँ विरोधिभागका त्याग है प्रकार जिसका । ऐसी ३संगति (शब्दकी लक्षणावृत्तिकरि समष्टिव्यष्टि रूप तीन ४देहनके अतर्गत पञ्चकोश (अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय)रूप ज-

१८ स्वानुभवादार्शस्तोत्रम् ॥११॥ - [वेदांत

गततै ९पर - (लक्ष्य) रूप - “ तत्त्वमसि ” इस
महावाक्यगत - ६ “ तत् ” अरु “ त्वं ” इन दो
पदोंके अर्थनकूं ७पृथक् (भिन्न) करिके । ९
औ १० “ असि ” (हो) इस पदकरि ११ इन
(उक्त दोःपदार्थन) के एकताके बोधक तीन-
संबंध (दोपदनके सामानाधिकरण्य दो वाच्या-
र्थनके विशेषण विशेष्यता । दोलक्ष्यनके लक्ष्य-
लक्षकभाव) करि सिद्ध १२ एकताकूं [बोधके
- सहकारी कारण शुद्ध] १३ अंतःकरणकरि १४
स्मरणकरिके । १५ जिसकूं १६ जानिके १७ मुक्ति-
स्वरूप १८ परब्रह्मकूं पावता है । १९ सो
२० परमात्मा आप २१ मैं हूं ॥ ३ ॥

अब मंद (कुतर्कदूषितबुद्धिवाले) अधिका-
रीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके
मार्गकूं कहे हैं:-

चार्वाकादिपरीक्षकैरभिमता-
नात्मत्वबुद्ध्या जटान् ।

कोशान् पंच विविच्य तुच्छमतिना
संवाध्य युक्त्या मुधीः ॥

‘शेषं पुच्छतया मर्त संहमिति
मृत्यवस्वरूपं हृदं ।

ज्ञात्वा ‘यं परमेति ‘मुक्तिवपुषं

‘सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ४ ॥

अर्थः— १ तीव्रबुद्धिवाला पुरुष । २ चार्वाक
(देहात्मवादी) आदिक परीक्षक (युक्तिकुशल)-
नकरि ३ अहंभावकी बुद्धिकरि ४ अभिमत ५ ज-
ह ६ पंच अन्नमयादि ७ कोशनकुं ८ युक्तिसे ९
विवेचनकरिके (आत्माते भिन्न जानिके) । “ ये
तुच्छ (असत्) हैं ” ऐसी बुद्धिकरि सम्यक् वा-
धकरिके (परमार्थसत्ताकरि इनके त्रिकालअ-

२० . स्वानुभवाददर्शस्तोत्रम् ॥११॥ [विदांत

भावका निश्चय करिके) । आनंदमयकोशरूप
पक्षीके ब्रह्मरूप १० पुच्छ होनेकरि तैत्तिरीय-
श्रुतिविषै माने हुये ११ प्रत्यक् स्वरूप (प्रत्य-
गात्मासै अभिन्न) १२ शेषरूप १३ जिसकूं १४
मैं हूं । ऐसै १५ दृढ (संशय औ विपर्ययसै रहित)
जानिके १६ मुक्तिस्वरूप १७ परब्रह्मकूं पावताहै ।
१८ सो १९ परमात्मा आप २० मैं हूं ॥ ४ ॥

अब जीवन्मुक्तिके विलक्षण आनंद अर्थ वैराग्य
बोध अरु उपशमके एकत्र स्थितिके प्रकारकूं
कहै है—

स्वांतं वासनया मलीमसपथो
पीनं गुणाभ्यां भृशं ।
“वैराग्येण” विवेकजन्मवपुषा
देग्ध्वा हि पूर्वं च ताम् ॥
न्यकृतौ नु रजस्तमस्युपरमात्
संपाद्य शुद्धं मृतं ।

विनोद ९] स्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ॥११॥ २१

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवशुपं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ५ ॥

अर्थः— १वासनाकरि मलिन औ २रजोगुण
अरु तमोगुणकरि अत्यंत ३पीन (स्थूल) भये
४मनकूं ५विवेकसैं जन्मयुक्त स्वरूपवाले ६वैरा-
ग्यकरि ७प्रथम ८ता (वासना)कूं ९दग्ध (क्ष-
य)करिके १०औ ११जिसकूं १२जानिके १३
अनंतर १४उपशम (ब्रह्माभ्यासजनित चित्त-
निरोधरूप समाधिमय राजयोग)सैं १५रजो-
गुण अरु तमोगुणकूं १६तिरस्कार करिके १७
शुद्ध (निर्वासनिक) अरु मृत (आविर्भूत स-
त्त्वगुणवाला होनेकरि नष्टस्थूलभाववाला)
१८संपादनकरिके [जीवत्तदज्ञानिणै] १९मु-
क्तिस्वरूप २०परब्रह्मकूं प्राप्तताहै २१सो २२
परमात्मा आप २३मैं हूं ॥ ५ ॥

२२ स्वानुभवाददर्शस्तोत्रम् ॥११॥ [वेदात्

अथ सप्तज्ञानभूमिकाके कथनपूर्वक उक्त
स्थितिकी अवधि औ फलकूं दिखावै हैं:-

जागृत्कभितयं तैर्यैकमपरं

स्वप्नं सुषुप्तिद्वयं ।

संपाद्यैव तुरीयगां सुविमले

पूर्णे चेष्टया युते ॥

सांद्रानंदपयोनिधौ सुरमते

ध्यात्वाऽथ जीवंन्नपि ।

ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ६ ॥

अर्थ:- १तीनजागृत (शुभेच्छा । सुविचारणा । तदुत्तमानसारूप तीनभूमिका) कूं २संपादनकरिकेहीं । ३तैसैं ४जिसकूं ५जानिके ६एक अपर (मसिद्धस्वमतैं विलक्षण) स्वप्न (चतुर्थ भूमिका) कूं [संपादनकरिकेहीं तैसैं] ७ध्यान

विनोद ५] त्वानुभवादर्थस्तोत्रम् ॥११॥ २३

(समाधि) करिके < दोसुपुष्टि (पंचम, षष्ठ भू-
मिका) कूं [तैसै] ९तुरीयगा (सप्तमभूमिका) कूं
[संपादन करिकेहीं] १०जीवता हुआ बी पुरुष ११
सुविमल (विशुद्ध) १२औ १३पूर्ण औ स्वरूप-
कार १४वृत्तिकरि सहित सघनआनंदके समुद्रविपै
सुष्ठुप्रकारसैं रमता है । १५अनंतर (देहपातके
भये) १६विदेहमुक्तिस्वरूप १७परब्रह्मकूं पावता
है । १८तो १९परमात्मा आप २०मैं हूं ॥ ६ ॥

अब उक्तस्थितिके साधनभूत अष्टांगसहित
निर्विकल्पसमाधिरूप राजयोगकूं सूचन करते
हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैं:-

कृत्वा पंचविधान् यमांश्च नियमान्
सिद्धादिकं चासनं ।

प्राणानां नियमं तैर्ध्रियगणं
संयम्य शब्दादितः ॥

ध्यानं धारणया समौधियुगलं
संपाद्य धीरात्मवान् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवपुषं

'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ७ ॥

अर्थः— १पांचप्रकारके यमोंकूं औ नियमों-
कूं २औ ३सिद्धआदिक ४आसनकूं औ ५प्रा-
णोंके निरोधकूं ६करिके ७तैसैं इंद्रियनके गणकूं
८शब्द आदिकतैं ९रोधिके । तैसैं १०धारणाकरि
११ध्यानकूं [तैसैं सविकल्प अरु निर्विकल्प भेदतैं]
१२दोसमाधिकूं संपादन करिके । धीरचित्तवाला
हुया पुरुष १३जिसकूं १४जानिके (साक्षात् क-
रिके) उभय १५मुक्तिस्वरूप १६परब्रह्मकूं पाव-
ताहै । १७सो १८परमात्मा आप १९मैं हूं ॥ ७ ॥

अब उक्त अष्टांगसहित योगविषै असमर्थ-
ज्ञानीकूं उक्तफलकी प्राप्तिअर्थ विचाररूप सुगम-
उपायकूं कहै हैंः—

मिथ्यात्वं मनसा स्मरंस्त्रिजगतो
देहादिभानं त्यजन्-।
वर्ष्मोपाधिकृतां भिदां विघटयन्
कुर्वन् मनो निर्मलम् ॥
ब्रह्मास्मीति विभावयन्ननुदिनं
स्वानन्दमास्वादयन् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवपुषं
'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ८ ॥

अर्थः— १ जिस (प्रत्यक् अभिन्न परमात्मा)
कूं २ जानिके [स्थूलसूक्ष्मकारणभेदार्थे] ३ त्रि-
विधप्रपञ्चके निश्चित ४ मिथ्यापनैकूं मनसैं स्म-
रण करता हुआ । ५ देहादिकके भानकूं त्यागता
हुया । ६ देहरूप उपाधिके किये-भेदकूं नाश
करता हुआ । ७ मनकूं निर्मल (अचंचल) ८ क-
रता हुआ । ९ निरंतर १० " मैं ब्रह्म हूं " ऐसैं भावना
करता हुआ । १० स्वरूपानन्दकूं आस्वादन करता
हुया । उभय ११ मुक्तिस्वरूप १२ परब्रह्मकूं पा-

२६ स्वानुभवोद्देशस्तोत्रम् ॥११॥ [वेदांत

वताहै । १३सो १४परमात्मा आप-१५मैं हूँ ॥८॥

अब उक्तविचारआदिक साधनोंविषे असमर्थ मंदबुद्धिवाले पुरुषनके अर्थ ज्ञानके नाना-साधन ज्ञान अरु मोक्षकूँ कहते हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैं:-

ईशस्य स्मरणं द्विधौ क्षणुदिनं

तन्नामसंकीर्तनं ।

बौ गंगोत्थपनं मुँकृत्य पठनं

गीतोऽस्मृतेः प्रत्यहम् ॥

संतसंसद्रूपनं स्वैकर्म यजनं

दौर्नं सुदत्त्वा शुचिर् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवपुषं

'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ९ ॥

अर्थ:- १निरंतर २ईश्वरके सगुण निर्गुण भेदतैं ३द्विविध ४स्मरण (चितनरूप उपासन) कूँ । ५वा. ६निरंतर ता (ईश्वर)के नामके सम्यक् (चित्तकी एकाग्रतापूर्वक) कीर्तनकूँ ।

विनोद ५] स्वानुभवादर्थस्तोत्रम् ॥११॥ २७

वा ७ गंगास्नानकूं । वा ८ प्रतिदिन ९ गीतास्मृतिके
 १० पाठकूं । वा प्रतिदिन ११ संतोंकी समाविष्ट
 गमनकूं । वा १२ स्वकर्म (अपने वर्णाश्रमके धर्म)
 कूं । वा प्रतिदिन १३ यजन (भगवत्पूजन) कूं
 १४ सुष्ठुप्रकारसे करिके । वा १५ दानकूं [सुष्ठु
 प्रकारसे अद्धापूर्वक सत्पात्रके अर्थ] देके । पवित्र
 हुआ पुरुष १६ जिसकूं १७ जानिके १८ मुक्ति-
 स्वरूप १९ परब्रह्मकूं पावता है । २० सो २१ पर-
 मात्मा आप २२ में हैं ॥ ९ ॥

अब “ स्वानुभवादर्थ ” शब्दके अर्थसहित
 ताके प्रयोजनकूं कहै हैं:-

‘येनास्मिन्विमले सुवाक्यनिकरा-
 दर्शे विवेकान्विते ।
 सेवासुहृदुदीप्तदेशिकवचो-
 दीपप्रभोद्भासिते ॥
 शुद्धस्वांतदृशा हि पश्यति जनः
 स्वात्मानमेवाद्वयं ।

११ तेन स्वानुभवाय वाय दयया-

ॐ दशोऽयमादिशितः ॥ १० ॥

अर्थः— १ जिस कारणकरि २ विमल (नि-
र्दोष) औ ३ विवेककरि युक्त औ सेवारूप
तैलकरि प्रदीप्त जो गुरुके वचनरूप दीपककी
प्रभा । तिसकरि प्रकाशित ४ इस ५ छेछवाक्योंके
समूहरूप दर्पणविपै ६ अधिकारी जन ७ शुद्ध
अंतःकरणरूप चक्षुकरिहीं ८ अद्वय (ब्रह्मसँ अ-
भिन्न) ९ स्वात्माकुंही १० देखताहै (अपरोक्ष
जानताहै) । ११ तिस कारणकरि १२ शुभ १३
स्वानुभवके अर्थ १४ यह १५ आदर्श है । तो मुमु-
क्षुनके ऊपर १६ दयाकरि १७ दिखाया ॥ १० ॥

इति श्रीमद्भाषुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य
पीतांबरान्हविदुषा विरचितः स्वानुभवादर्थः
समाप्तः ॥ ११ ॥

शरीफ सालेमहमद (काठियावाड) बेरावल.

दाउद शरीफ—ओभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहाँसे मिलेने औ डाक
महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्गुपेणलका डाककमो-
शन पड़ेगा ॥ यह सर्वप्रथम सारे हिंदुस्थानमें जहाँ जहाँ
पुस्तक बेचनेवाले हों । उन्हींसे यी मिल सकते हैं ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावलि तथा यड़ी अकारादि अनुक्रमणिका-

सहित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ४।

श्रीसुंदरविलास । शनसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... .. १॥१

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०॥१

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(जोदेही ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०॥१

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलभाषा.... .. ०॥२

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीय. ... ४

श्रीबालबोध टोकासहित. ०॥=

„ उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृष्ठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदातपदार्थकोश ॥ आगेद०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसी चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अककी कीमत ०) ॥
रप्पी है । औ कोइसी ६ अकका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

५१ वेदातपदावलि (श्रीविचारच. ५ अस्त्राशक्तके पद-

द्रोदयका सार)

६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

५२ वेदातपदार्थमञ्जा.

सहित.

३ सूफीओंके गजल.

* ७ वेदातस्तोत्रसमूह अर्थ-

४ देवाजी भक्तके पद.

सहित. अक ३-४-५-६

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे क्रमसे
नही परंतु समयसजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ ४ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत

भाषादीपिकासहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सन् १९४५-सन् १८८९ ॥

(प्रकटनार्थे सर्वद्वय स्वाधोन रसे है)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत श्री अन्यमहा-
त्माकृत सस्कृतस्तोत्रनकृ पाठ किंवा कठ करते हैं । परंतु
निष्ठाही आरुढ़तामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तार्ति परमशर-
णिक त्रयनिष्ठपद्धित श्रीपीतांबरजी महाराजनें दयाकरिके
स्तोत्रनकी भाषा करी है । श्री सस्कृतमें अल्पअभ्यास-
वानकू भी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । तार्ति मूलमें
श्री भाषामें अन्वयअनुसार अर्थकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस पष्ठअंशमें जितने स्तोत्र छपे
हैं सो नीचे लिखे हैं —

श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥ १२ ॥

श्रीपरापूजा ॥ १३ ॥

श्रीमनीपापचक्रस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

घटनसाहेबके गजेंद्र ॥ २ ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ ४ ॥

॥ अथ श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् १२

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

विभवं दर्पणदृश्यमाननगरी-

तुल्यं निजांतर्गतं ।

पश्यन्नात्मनि मायया वहिरिबो-

द्धृतं यथौ निद्रया ॥

यैः संज्ञात्कुरुते प्रबोधसमये

स्वात्मानमेवौद्वयम् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं

श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ १ ॥

अर्थः—१ दर्पणविप दृश्यमान नगरीके तुल्य

२ दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ [विदांत

निजांतरगत २विश्वकूं ३जैसैं निद्राकरि (देखिये
है ।) तैसैं ४मायाकरि बाहिर ५उद्धूतकी ६न्या-
ई ७आत्माविपै ८देखताहुया । ९जो १०प्र-
बोधके समयमें ११अद्वयरूप १२ स्वात्माकूं-
ही १३साक्षात् (अपरोक्ष) करता है । १४तिस
श्रीगुरुकी मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई
१६यह १७नमस्कार होहु ॥ १ ॥

बीजस्यांतरिवांकुरो जैगदिदं
ग्राह्य निर्विकल्पं पुन-
र्मायाकल्पितदेशकालकलना-
वैचित्र्यचित्रीकृतम् ॥

मायावीव विजृम्भयत्यपि महा-
योगीव यः स्वेच्छया ।
तैस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमो ईदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ २ ॥

अर्थः—१बीजके भीतर २अंकुरकी ३न्याई
४यह ५ जगत् ६पूर्व निर्विकल्प था । फिर मा-
याकरि कल्पितदेशकालकी कल्पनाके विचि-
त्रताकरि चित्रकी न्याई किया है ॥ ७जो ८मा-
यावीकी न्याई औ ९महायोगीकी न्याई १०
स्वइच्छाकरि ११विजृम्भण (बिलास)कू करता-
नी है । १२तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई १४यह १५नमस्कार होहु ॥ २ ॥

यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्
कल्पार्थगं भासते ।

सांसाचैश्वमसीति वेदवचसा
यो बोधयसांभितान् ॥

यैत्साक्षात्करणाद्रंवेन्न पुनरा-
वृत्तिर्भवांभोनिधौ ।

तैस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः १३दे
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ३ ॥

अर्थः—१जाहिका स्फुरण सत्स्वरूप हुआ
 असत्के तुल्य अर्थोविषे अनुस्यूत भासता है ।
 औ २जो ३“तत्त्वमसि” इस वेदके वचनकरि
 ४आश्रितन (शरणागतन)कूं ५साक्षात् ईवोधन
 करे है । औ ७जिसके साक्षात्कारतैं ८संसार-
 सागरविषे ९पुनरावृत्ति (पुनर्जन्म) १०होवै न-
 हीं । ११तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १२श्रीदक्षिणा-
 मूर्तिके तर्हि १३यह १४नमस्कार होहु ॥ ३ ॥

नानाछिद्रघटोदरस्थितमहा-
 दीपप्रभाभास्वरं ।

ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरण-
 द्वारा वहिः स्पंदते ॥

जानामीति तमेव भांतर्मनुभा-
 त्येतैत्समस्तं जगत् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम ईदं
 श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ४ ॥

अर्थ:—१ नानाछिद्रवाले घटके उदरविषे
स्थित बड़ेदीपके प्रभाकी न्याई । प्रकाशवाला
२ जाका ३ ज्ञान ४ तो चक्षुआदिकरणद्वारा बा-
हिर स्फुरता है । “मैं जानता हूँ” ऐसों तिसीहीं-
के भासमान होते ५ यह समस्तजगत् ६ पीछे
भासता है । ७ तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८ श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई ९ यह १० नमस्कार होहु ॥ ४ ॥

देहं प्राणमर्षाद्रियाप्यपि चलां

बुद्धिं च शून्यं विदुः ।

स्त्रीबालांधजडोपमास्त्वं ह्यमिति

भ्रांतौ भ्रेशं वादिनः ॥

मायाशक्तिविलासकल्पितमहा-

व्यामोहसंहारिणे ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं

श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ५ ॥

अर्थः—१ स्त्री बाल अंध अरु जडकां उपमावा-
ले २ अतिशयवादी ३ भ्रांत पुरुष ४ तौ ५ देह-
कू औ प्राणकू बी औ इंद्रियनकू बी औ वंचल-
बुद्धिकू औ शून्यकू ६ “मैं हूं” ऐतैं ७ जानते
हैं । ८ तिस ९ मायाशक्तिके विलास (कार्य) रूप
कल्पित महाव्यामोहके संहार करनेहारे १०
श्रीगुरुमूर्तिरूप ११ श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई १२ यह
नमस्कार होहु ॥ ५ ॥

राहुग्रस्तदिवाकरंदुसदृशे

मायासमाच्छादनात् ।

सन्मात्रः करणोपसंहरणतो

योऽभूत्सुपुनः पुमान् ॥

प्रांगस्वाप्सामिति प्रबोधसमये

येः प्रत्यभिज्ञायते ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं

श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ६ ॥

अर्थः—१मायाकरि सम्यक् द्वापनेतै । २रा-
हुकरि ग्रस्त सूर्य औ चद्रके तुल्य ३सत्मान-
रूप ४जो ५पुरुष । ६करणोंके उपसहार (विलय)
तै ७सुपुत्र ८दोवैहै । औ ९जो १०बोव (जाग्र-
त) के समयविषै ११‘मैं पूर्व सोयाथा’ ऐसै
१२प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्षका विषय करिये है । तिस
श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणामूर्तिके तार्ई १४यह
१५नमस्कार होहु ॥ ६ ॥

बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा
सर्वास्ववस्थास्वपि
ज्याष्टत्तास्वनुवर्तमानमहमि-
त्यंतःस्फुरतं सदा ॥
स्वात्मानं मेकटी करोति भजता
यो भद्रया मुद्रया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ७ ॥

८

दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ [वेदांत

अर्थः—१बाल्यआदिकनविषै बी । २तैसैं
३जागृत्आदिक ध्व्यावृत (परस्परभिन्न) ५सर्व
अवस्थाकेविषै बी ६अनुवर्तमान । औ 'मै
हूं' ऐसैं भीतर ७सदा ८स्फुरनेवाले ९स्वात्माकुं
१०जो ११भजन करनेवालेके मध्य १२भद्रा-
मुद्राकरि १३प्रकट करै है । १४तिस श्रीगुरु-
मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके तारै १६यह
१७नमस्कार होहु ॥ ७ ॥

विश्वं पश्यति कार्यकारणतया

स्वस्वामिसंबंधतः ।

शिष्याचार्यतया तथैव पितृपु-

त्राद्यात्मना भेदतः ॥

स्वप्ने जाग्रति चै यं एष पुरुषो

मायापरिभ्रामितम् ।

तैस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो यह पुरुष मायाकरि चारिऔर-
तैं भ्रमकूं प्राप्त हुया । २स्वमविषै ३वा ४जाग्र-
तविषे ५कार्यकारणभावकरि । औ स्वस्वामी-
संबंधतैं औ शिष्यभाचार्यभावकरि । तैसैंही
पितापुत्रआदि स्वरूपकरि भेदतैं ६विश्वकूं दे-
खता है । ७तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई ९यह १०नमस्कार होहु ॥ ८ ॥

भूरंभास्यनलोऽनिलोऽबरमह-
र्नाथो हिमांशुः पुमा-
नित्यैवाभाति चैराचरात्मकमिदं
यस्यैव मूर्त्यष्टकम् ॥
नान्यत् किंचन विद्यंते विमृशतां
यस्मात्परस्माद्विभो-

स्तंस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ९ ॥

अर्थः—१ पृथ्वी जल तेज वायु आकाश सूर्य
चंद्र औ पुरुष । ऐसैं २ चराचरस्वरूप यह जि-
सीहीकी मूर्तिका अष्टक ३ भासता है । औ
४ विचार करनेवाले पुरुषनकूं जिस ५ विभुरूप
६ परमात्मातैं ७ अन्य कछु बी ८ नहीं ९ विद्यमान
है । १० तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ११ श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई १२ यह १३ नमस्कार होहु ॥ ९ ॥

सर्वात्मत्वमिति स्फुंटीकृतमिदं
यस्मादमुष्मिस्तवे ।

तेनास्य श्रवणात्तथार्थमनना-

द्ध्यानाच्च संकीर्तनात् ॥

सर्वात्मत्वमहाविभूतिसहितं

स्यादीश्वरत्वं स्वतः ।

सिद्ध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं
चैश्वर्यमव्याहतम् ॥ १० ॥

अर्थः—१जाते ३म स्तोत्रविधौ २ऐसे ३यह ४
सर्वात्मभाव ५स्पष्ट किया है। ६तिस हेतुकरि
याके श्रवणते तथा अर्थके मननते औ ध्यानते
औ संकीर्तनते । सूर्यआत्मभावरूप महावि-
भूतिकरि सहित ७ईश्वरभाव स्वतःसिद्ध होवै
है। सो केर अष्टप्रकारसे परिणामक पाया
हुया ८अव्याहत (अभंग) ऐश्वर्य १०होवै
है ॥ १० ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचा-
र्यविरचितं दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं समाप्तम् ॥१२॥

॥ अथ श्रीपरापूजा प्रारंभः ॥१३॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सैर्वाधारस्य चोत्सनम् ।
स्वच्छस्य पाथर्मर्ध्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः ॥१॥

अर्थ—१पूर्णका आवाहन कहां होवैगा । २औ
३सर्वाधारका ४आसन कहां होवैगा । औ स्व-
च्छका पाथ. ५अर्ध ६अर्ध्य औ ७शुद्धकूं आ-
चमन कहाँतैं होवैगा ॥ १ ॥

निर्मलस्य कुतः स्नानं वैखं विश्वोदरस्य च ।
निरालंबस्योपवीतं पुष्पं निर्वासनस्य च ॥२॥

अर्थः—१निर्मलकूं २स्नान ३कहांतैं होवैगा ।
४औ ५विश्वोदरकूं ६वस्त्र अर् ७निरालंबकूं
उपवीत (जनोई) ८अर् ९निर्वासनकूं १०पुष्प
कहांतैं होवैगा ॥ २ ॥

निर्लेपस्य कुंतो मंधो^३ रम्यस्याभरणं कुतः ।

नित्यतृप्तस्य नैवेद्यं तांबूलं च कुंतो विभोः ॥३॥

अर्थः—१ निर्लेपकू २ गंध ३ कहाँतें होवैगा ।
औ ४ रम्य (रमणीय) कू आभरण कहाँतें हो-
वैगा । औ नित्यतृप्त ५ विभुकू ६ नैवेद्य ७ अन्न
८ तांबूल ९ कहाँतें होवैगा ॥ ३ ॥

प्रदक्षिणा ह्यनंतस्य हृदयस्य कुंतो नतिः ।

वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतः स्तोत्रं^५ विधीयते ॥४॥

अर्थः—१ प्रसिद्ध अनंतकी २ प्रदक्षिणा औ
३ प्रसिद्ध अद्वितीयकू ४ नति ५ कैतें होवैगी । औ
६ वेदवाक्योंकरि अवेद्यका ७ स्तोत्र ८ कहाँ ९ वि-
धान करियेहै ॥ ४ ॥

स्वयं प्रकाशमानस्य कुंतो नीराजनं विभोः ।

अंतर्वहिष्य पूर्णस्य कंथमुद्रासनं भवेत् ॥ ५ ॥

अर्थः—१स्वयंप्रकाशमान २विभुका ३नीराजन
(आरात्तिक) ४कहांतैं होवैगा । औ ५भीतर
अरु बाहिर पूर्णका ६उद्वासन (विसर्जन) ७कैतैं
होवै ॥ ५ ॥

एवमेव परापूजा सर्वावस्थासु सर्वदा ।

एकबुद्ध्या तु देवेशे विधेया ब्रह्मवित्तमैः॥६॥

अर्थः—१इसप्रकारतैंहीं परापूजा सर्वअव-
स्थाओंविषै सर्वदा एकबुद्धितै ती देवेशविषै
ब्रह्मवित्तमोंकरि श्कर्तव्य है ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता परापूजा

समाप्ता ॥ १३ ॥

अथ श्रीमनोपापंचकस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

सैसाचार्यस्य गमने

कदाचिन्मुक्तिदायकम् ।

काशीक्षेत्रं प्रति सह

गौर्या मार्गे तु शंकरम् ॥ १ ॥

अंशवेपथरं दृष्ट्वा

गच्छगच्छेति चाब्रवीत् ।

शंकरः सोऽपि चांडौलस्-

तं पुनः माह शंकरम् ॥ २ ॥

अर्थः—१कदाचित् मुक्तिदायक काशीक्षेत्रके प्रति २श्रीशंकराचार्य गमन ३करते थे । तहां ४मार्गविषे तो ५गौरी ६सहित ७चांडाल-वेपधारी ८शंकरकू ९देखिके । १०श्रीशंकराचार्यस्वामी ११“गच्छ गच्छ (रस्ता छोड)” ऐसै कहते भये ॥ १२सो १३चांडाल १४वी १५तिर १६श्रीशंकराचार्यकूं १७फेर कहता मयाः—॥ १—२॥

॥ आर्यावृत्त ॥

अन्नमयादन्नमय-

मथवा चैतन्यमेव चैतन्यात् ।

द्विजवर दूरीकर्तुं

वाञ्छसि किं ब्रूहि गच्छ गच्छेति ॥३॥

अर्थः—१हे द्विजवर (कर्मजड) ! २क्या
३ "गच्छ गच्छ" ऐसैं [कहनेकरि] ४अन्नमयतै
अन्नमयकू अथवा ५चैतन्यतै ६चैतन्यकूही ७दूरि
करनेकू इच्छताहै ? सो ८कथन कर ॥ ३ ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं छन्दः ॥

किं गंगांबुनि विवितेंऽवरमणौ

चांडालवाटीपयः ।

पूरे वांतरमस्ति कांचनघटी

मृत्कुंभयोर्वाविरे ॥

प्रसंग्वस्तुनि निस्तरंगसहजा-

नंदावबोधाम्बुधौ ।

विप्रोऽयं श्वपचोऽयमिष्यपि महान्
कोऽयं विभेदभ्रमः ॥ ४ ॥

अर्थः—१क्या गंगाजलविषै २वा ३चांडाल-
नके गल्लीके जलके पूरमे ४ प्रतिविधित सूर्यविषै
५वा ६सुवर्णके घट औ मृत्तिकाके घटमें ७आ-
काशविषै ८भेद है ! (कितु नहीं है)॥ ९निस्तरंग
सहजआनंद अह ज्ञानके समुद्ररूप १०मत्स्यगात्म-
वस्तुविषै ११"यह १२विप्र है १३यह १४चां-
डाल है" । १५ऐसा बी १६कौन यह १७बड़ा
१८भेदभ्रम [तुजकुं भया] है । ॥ ४ ॥

जगत्स्वप्नसृष्टिषु स्फुटतरा

यौ संविदुज्जृम्भते ।

यौ ब्रह्मादिपिपीलिकांततनुषु

प्रोक्ता जेगत्साक्षिणी ॥

सैवाहं न च दृश्यवस्तिवन्ति दृढ-

प्रज्ञापि यस्यास्ति 'चेच्

चांडौलोऽस्तु सं तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
 सेषा मनीषा मेमे ॥ ५ ॥

अर्थः—तहां श्रीशंकराचार्यस्वामी कहै हैं:—१जो संवित् (चित्ति) रजागृतस्वम् अरु सुषुप्तिविषै अत्यंतस्पष्ट रविलसती है । औ ४जगत्की साक्षी-रूप ५जो (संवित्) ब्रह्मासि आदिलेकै चीटि-पर्यंत शरीरनविषै ओतप्रोत है । ६“सोई मैं हूं ७औ दृश्यवस्तु ँनहीं है” । ९ऐसी दृढबुद्धि बी १०जब ११जाकू है । १२सो तो १३चांडाल हो वा १४द्विज हो । परंतु सर्वका गुरु है । ऐसी यह १५मेरी १६बुद्धि (निश्चयरूपरुत्ति) है ॥५॥

ब्रह्मैवाहमिदं जगच्च सकलं

चिन्मात्रविस्तारितम् ।

सर्वं चैतदविधेया त्रिगुण्या

क्षेपं मेया कल्पितम् ॥

इत्थं यस्य दृढा मतिः सुखतरे

निसे 'परे' 'निर्मले' ।

चांडालोऽस्तु सँ तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
त्येषा मनीषा मम ॥ ६ ॥

अर्थः—१मैं ९औं सकल चिन्मात्ररूप विस्तारित यह जगत् ब्रह्मही है । ९औं इसर्व उत्त-पूर्ण यह ९त्रिगुणरूप १०अविद्यासँ ११सुज-करि कल्पित है । ऐसी जाकी दृढमति अत्यंत सुखरूप नित्य १२निर्मल १३परब्रह्मविषै है । १४सौ तो १५चांडाल हो वा १६द्विज हो । परंतु गुरु है । ऐसी यह १७मेरी १८बुद्धि है ॥६॥

शैश्वर्यभरमेव विश्वमेतिलं

निश्चित्यै वाचा गुरो-

निस्त्रं ब्रह्मं निरंतरं विप्रदेशता

निर्व्याजशांतात्मना ॥

भूतं यौवि चै दुष्कृतं प्रदेहता

संविन्मये पावके ।

प्रोत्साधाय समर्पितं स्वंवपुरिः-

त्येषा मनीषा मेम ॥ ७ ॥

अर्थः—१संपूर्ण २विश्वकुं ३निरंतर नश्वरही है । ऐसैं ४गुरुके ५वचनतैं ६निश्चय करिके ७नित्य ८निरंतर ९ब्रह्मकुं १०निष्कपट शांत-चित्तकरि ११विचारवाले । १२भूत १३औ १४ भायी १५पापकुं १६संदित् (ज्ञान)मय अ-मिविषै १७दहन करनेवाले जिसने १८अपना शरीर १९प्रारब्धके अर्थ समर्पण किया है । सो गुरु है २०ऐसी यह २१मेरी २२बुद्धि है ॥ ७ ॥

या तिर्यङ्मनरदेवताभिरहमि-

त्यन्तः स्फुटा गृह्यते ।

यद्रासा हृदयाक्षदेहविषया

भांति स्वतोऽचेतनाः ॥

तां भास्यैः पिहितार्कमंडलनिभां

स्फूर्तिं सदा भावयन् ।

योगी निर्द्वैतमानसो हि गुंरुरि-
त्येषा मैनीपा मम ॥ ८ ॥

अर्थ:-१जो (स्फूर्ति) तिर्यक् नर औ देवता
बोकरि "मैं हूँ" ऐसी अंतःकरणविषै स्पष्ट ग्रहण-
करिये है । औ जिसके प्रकाशकरि २स्वतः अचे-
तनरूप ३अंतःकरण इंद्रिय देह औ विषय भा-
सते है । ४तिस मास्य (प्रकाश्य बादलन)
करि ढांपेसूर्यमंडलके तुल्य स्फुर्तिकू सदा भावना
करताहुया योगी (ज्ञानी) ५जातै ६आनंदित-
मनवाला होवे है । तर्तै ७गुरु है । ऐसी यह
८मेरी ९बुद्धि है ॥ ८ ॥

यत्सौख्यांबुधिलेशलेशत इमे
शक्रादयो निर्द्वैता ।
यैश्चित्ते नितरां प्रशान्तकलने
लब्ध्वा मुनिर्निर्वृतः ॥

येस्मिन्नित्यसुखांबुधौ गलितधी-

ब्रह्मैव न ब्रह्मविद्यः ।

कश्चित्स सुरेन्द्रवन्दितपदो

नूनं मनीषा मयै ॥ ९ ॥

अर्थः—१जिस आनंदसमुद्रके लेशतैं ये इं-
द्रादिक आनंदित हैं । औ २मुनि जो है सो
३निरंतर प्रशंतकल्पनावाले ४षित्तविषै ५जि-
सकूं ६पायके ७आनंदित होवैहै । औ ८नित्य-
सुखके समुद्ररूप ९जिसविषै १०गलितबुद्धि-
वाला पुरुष ब्रह्मही है ११ब्रह्मवित् १२नहीं ।
ऐसा जो १३ कोईबी है सो सुरेन्द्रकरि वंदित-
पदवाला निश्चयकरि गुरु है । ऐसी १४मेरी
१५बुद्धि है ॥ ९ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं मनीपापंचक-
स्तोत्रम् समाप्तम् ॥ १४ ॥

दीवाने वतनमेंसे
॥ गजेल ॥ १ ॥

(“गइ एकू न एकू जो हवा पलटू” की राह)

खुदाइ कइता है जिस्कु आलम
सो ये भि है एक खियाल मेरा ।

बदलना सूरत हजोर दवसे
हरेक दम्में है हाल मेरा ॥ १ ॥

अर्थ:-जिसकुं लोक ईश्वर कहते हैं सो मात्र
मेरी कल्पनाही है औ हजारप्रकारसे जो प्राणि-
योंकी आठतीका पलटना है । सो तिनोके प्र-
त्येक श्वासमें मेरी स्थितिकुं बोधन करे है ॥१॥

कहीं सजन्जल् कहीं हूँ सूरत
कहीं हूँ दीद और कहीं हूँ हैरत ।

नजर हुई है नसीब जिन्कु
बो देखते हैं जमाल मेरा ॥ २ ॥

अर्थ:—कहुं आभास तो कहुं बिबरूप हूं।
 कहुं दर्शन तो कहुं दृश्यरूप हूं। परंतु जिनोकूं
 गुरुकपासे ज्ञानचक्षु प्राप्त भई है सो मेरे स्वरूपकूं
 देखते हैं ॥ २ ॥

कहीं हूँ सूरज कहीं हूँ जेरा
 कहीं हूँ दरिया कहीं हूँ कतरा।
 बफौरे कसरत्से अपने मुजकु
 हुवा है मिलना महाल मेरा ॥ ३ ॥

अर्थ:—यद्यपि कहुं सूर्य तो कहुं अणुरूप हूं॥
 कहुं समुद्र तो कहुं बिंदुरूप हूं। तथापि प्रपंच-
 दृष्टिसे मेरेकूं मेरा मिलना दुर्लभ भया है ॥ ३ ॥

तलस्मे इसरारे गन्जे मखफि
 कहूँ न सीनेकूं अपने क्युँ कर।
 अयौ हुवा हाले हदों आलम्
 हुवा जो जौहिर कमाल मेरा ॥ ४ ॥

अर्थ:—गुस्तरत्नखाणिका यह एक चमत्कार

है । सो मैं अपने अंतःकरणकूं किस वासते न कहूं ? जबसे मेरा ऐश्वर्य प्रकट भया है तबसे दोनूंलोक (इसलोक और परलोक) का मर्म स्पष्ट हो गया है ॥ ४ ॥

हिजाचे खुर्शेद जौतेमोनि

हुवा जहूरे नसूदे धरत ।

मिट्टा जो दुनियासे नाम आदस

हुवा है मुजकु बिसाल मेरा ॥ ५ ॥

अर्थः—नामरूपके प्रकट होनेसे लक्ष्यस्वरूप सूर्यकूं आवरण भया । परंतु जबसे जगतमेसे आदम नामका नाश भया तबसे मेरेकूं मेरी प्राप्ति भई है ॥ ५ ॥

हमेशा आँखेंकु बंध रखना

जमाल मोनिका देखना है ।

जो मोशेकर हैं वो है समाअत

जो बेजबानि है काल मेरा ॥ ६ ॥

अर्थ:—निरंतर बहिरमुखदृष्टीरूप नेत्रनकुं टांपना लक्ष्यस्वरूपका देखना है । जो एकांतमें बैठे हैं सो श्रवण करते हैं । तैसे मैं जिह्वाहित-काही यह कथन है ॥ ६ ॥

“अलस्तो कालूबला” कि रम्जें
न पूछ मुजसे वतन तु हरिजें ।

हुं आप मशगूल आप शागिल
जयाव खुद है सवाल मेरा ॥ ७ ॥

अर्थ:—वतन साहेब कहते हैं:—“मैं तुमारा ईश्वर हूं वां नहीं ? अवश्य हो ” इस विनोदकृ हे मुमुक्षु ! तूं मुजसे कदाचित् वारंवार मति पूछ ॥ सुन कहता हूं:—मैही बंध भया हूं औ मैही बंधका कर्ता हूं औ उक्तप्रश्न मेरा है तथा उत्तर बी मेराही है ॥ ७ ॥

१ ऐसा प्रसंग है कि “सृष्टिके आदिवालयमें परमेश्वरने सर्वजीवनकू पूछा जो ‘मैं तुमारा ईश्वर हूं वां नहीं’ ? तब कितनेक जीवोंने उत्तर दिया जो ‘अवश्य हो’ ॥

("तफरका होता है ऐसा भी" इत्यादिक राह)
 मैं न बन्दा न खुदा था मुजें मालूम न था ।
 दोनु इहत्से जुदा था मुजें मालूम न था ॥१॥

अर्थ:—मैं जीव नहीं था औ ईश्वर बी नहीं
 था परंतु दोनुंजपाधिसैं न्यारा था । इतना मे-
 रेकूं ज्ञात नहीं था ॥ १ ॥

शिक्रे हैरत हुइ आईनये दिलसे पैदा ।
 मानिये शाने सफा था मुजें मालूम न था ॥२॥

अर्थ:—अंतःकरणरूप दर्पणसैं एक आश्चर्य-
 रूप मूर्ति प्रकट हुई । तिसका अर्थरूप विव
 निर्मल था । परंतु मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ २ ॥
 देखता था मैं जिसे होके नदीदा हर्त ।

मेरी आँखोंमें लुपा था मुजें मालूम न था ॥३॥

अर्थ:—जिसकूं मैं चक्षुरहित होईके सर्वदि-
 शाओंमें देखता था । वो मेरी चक्षुनमें गुप्त था ।
 यह वृत्तांत मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ३ ॥

आपही आप हो यों तालिबो मतलूब है कौन ।
 मैं जो आशकूँ कहा था मुजें मालूम न था ॥४॥

अर्थ:—अपना आप होनेतैं इहां मुमुक्षु औ मोक्ष क्या है? अज्ञानदशामैं ऐसे कहता था कि “मैं आ-शक् हूं” परंतु उक्तअनुभव मेरेकूं ज्ञात नहीं था॥४॥
दिल्के आईनेकूं मैं रूवरू रख कर देखा ।
आपका रूपे सफा था मुजें मालूम न था ॥५॥

अर्थ:—अंतःकरणरूप दर्पणकूं मैंने सन्मुख राखिके देखा तो यद्यपि मेरा मुख निर्मल था तथापि सो मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ५ ॥

वजे मालूम हुई तुजसे न मिलनेकि सनम् ।
मैं हि खुद पर्दे हुवा था मुजें मालूम न था ॥६॥

अर्थ:—हे प्रिय ! तेरेसैं योग करनेकी युक्ति मेरेकूं ज्ञात न हुई । कोहेतैं जो मैंही आप आवरण भया था । यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ६ ॥

बोदे मुदत्त जो हुवा वस्ल खुला राजें वतन् ।
वासिले इकमें सदा था मुजें मालूम न था॥७॥

अर्थ:—दीर्घकालके पीछे जबब्रह्मात्माकी प्राप्ति भई तब मर्म खुल गया जो मैं वतन सत्यस्वरूपमें सर्वदा एकरस पूर्वसैंही था । परंतु यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था॥७॥

शरीफ सालिमहंमद (काठियावाड) बेरावल.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे प्रथम दगारे बहासे मिलेंगे औ डाक
महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्मुपेएवलका डाकनमी-
शन पड़ेगा ॥ यह सर्वप्रथम सारे हिंदुस्थानमें जहा जहा
पुस्तक बेचनेवाले है उनोंसे भी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावली तथा चंडी भकारादि अनुक्रमणिका-

सहित तृतीयावृत्ति २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... .. १।।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०।।

श्रीपंचदशी । मूल औ दोनाकी भाषा । दो विभागमें

(थोड़ेही प्रथम रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०।।

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलमान.... .. ०।-

श्रीईशाचष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीमें ४

श्रीयालबोध टीकासहित. ०॥२

„उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृष्ठेसहित ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदातपदार्थकोश ॥ आगेह० ४ थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसे छिहवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक भक्ती कीमत ०) ॥
रखी है । श्री कोइसी ६ अरुका मात्र ४ ०॥ पड़ेगा ॥

*१ वेदातपदावलि (श्रीवि- *७ वेदातस्तोत्रसंग्रह अर्थ-
चारचंद्रोदयका सार) सहित. अरु ३-४-५ ६

*२ वेदातपदार्थसंज्ञा. < श्रीदीवाने बतन.

३ सूफीओंके गजल. ९ श्रीशकराचार्यकृत अ-

४ देवाजी भक्तके पद. परोक्षानुभूति आदिक.

५ अस्वामक्तके पद. १० श्रीयोगवासिष्ठमैसै द-

६ प्रस्ताविकश्लोक अर्थसहित. शात दार्थात मूलसहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे नामसे
नही परंतु समयमंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

॥ श्रीमहावाक्यविवेक ॥

तत्त्वप्रकाशिकाख्याख्या सहित
ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत
सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंसदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४६-सन् १८८९ ॥

(प्रकटकर्ताने सर्वहक्क स्वाधोन रखे हैं)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद बंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १.

इन लघुग्रंथनसँ वेदांतनिष्ठ महापुरुषोंकू विनोद होवै
औ मुमुक्षुनकू आत्मज्ञानका अभ्यास होईके परमपदकी
प्राप्ति होवै । ऐसे दो हेतुकू चित्तविषे राखिके प्रकट किये
जाते हैं ॥

श्रीपंचदशी जैसा वेदांतविषे उत्कृष्ट मननसहायक प्र-
क्रियाकी दृढतामें उपयोगी अन्यग्रंथ नहीं है ॥ पूर्व सन्
१८७६ ॥ (१४ वर्षसँ पूर्व) यह ग्रंथ दो विभागमें ब्रह्म-
निष्ठपंडित श्रीपीतोबरजी महाराजकृत तत्त्वप्रकाशिकाव्या-
ख्यासहित मैंने छपाया था ॥ इसमें श्रीमहावाक्यविवेक
नामक पंचम लघुप्रकरण है । सो इस अंकमें प्रकट किया
है ॥ अंतमें श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक अर्थसहित
रखे हैं ॥

इसीअंककी रूनीपर पूर्णपंचदशी छपावनेका मैंने संक-
ल्प किया है । सो हरिइच्छाकरि कालपाइके सिद्ध होविगा ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

श्री पंचदशीगत

श्रीमहावाक्यविवेकनाम

पंचमप्रकरणप्रारंभः ॥ ५ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मंगलाचरण ॥

श्रीमत्सर्वगुरुन् नत्वा पंचदश्या तृभाषया ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥ १ ॥

अर्थः—श्रीयुक्तसर्वगुरुनकू नमनकरिके नर-
भाषासि पंचदशीके महावाक्यविवेक नाम पंचम-

१ चारिमहावाक्यनका है विवेक (विभाग) जिस-
विषे सो ॥

२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत
प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) में
करूं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥
नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।

महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः—श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन
दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्यविवेककी
व्याख्या मैं संक्षेपतैं करूं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनि-
पद्गत “प्रज्ञानं ब्रह्म” इस महा-
वाक्यका अर्थ ॥२८७-२८८॥

॥१॥ “प्रज्ञान” पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धि-
अर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमें प्रगट) जो च्यारि-

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ३

महावाक्य हैं तिनके अर्थकू क्रमैं निरूपन करते हुये परमहृपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविपै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत “प्रज्ञानं ब्रह्म” (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविपै “प्रज्ञान” शब्द (पद) के अर्थकू कहै हैं:—

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।

स्वादस्वाद विजानाति तत् प्रज्ञानमुदीरितम् १

[“ येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वादस्वाद विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम् ”] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक)कू देखता है औ शब्दकू सुनता है औ गंधकू सूंघता है औ शब्दकू बोलता है औ स्वादअस्वाद (रस)कू जानता है सो (वृत्तिउपलक्षित चैतन्य) “प्रज्ञान” कहा है ॥ १ ॥

२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत
प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) में
कहं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥
नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।

महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः—श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन
दोमुनीश्वरनकू नमनकरिके महावाक्यविवेककी
व्याख्या मैं संक्षेपतैं कहं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनि-
पद्गत “प्रज्ञानं ब्रह्म” इस महा-
वाक्यका अर्थ ॥२८७-२८८॥

॥१॥ “प्रज्ञान” पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकू मोक्षका साधन जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धि-
अर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमें प्रगट) जो च्यारि-

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ३

महावाक्य हैं तिनके अर्थकू क्रमते निरूपन करते हुये परमकृपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविषै प्रथम क्रमवेदकी ऐतरेयारण्यकमत “प्रज्ञानं ब्रह्म” (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविषै “प्रज्ञान” शब्द (पद) के अर्थकू कहै हैं:—

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।

स्वादस्वाद विजानाति तत् प्रज्ञानमुदीरितम् १

[“ येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वादस्वाद विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम् ”] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक) कू देखता है औ शब्दकू सुनता है औ गंधकू सूंघता है औ शब्दकू बोलता है औ स्वादअस्वाद (रस) कू जानता है सो (वृचिउपलक्षित चैतन्य) “ प्रज्ञान ” कहा है ॥ १ ॥

४ पंचदशी—माहावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत .

टीका:—जिस चक्षुद्वारा निर्गत (निकसी)
अंतःकरणकी वृत्तिउपहित (साक्षी)चैतन्यकरि
इस देखनैयोग्य रूपआदिककूं पुरुष (संघात-
रूप पुरुष) देखता है । तैसें श्रोत्रद्वारा निर्गत
अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)-
करि पुरुष शब्दके समूहकूं सुनता है । तेसैंही
घ्राण (नासिका)द्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्ति-
रूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि पुरुष
गंधके समूहकूं सूंघता है । औ जिस वाक्इंद्रिय,
अवच्छिन्न (उपहित)चैतन्यकरि पुरुष श-
ब्दके समूहकूं बोलता है । औ रसनइंद्रियद्वारा
निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चै-
तन्य)करि स्वादुअस्वादु दोनूंभांतिके रसकूं
पुरुष जानता है ॥ इहां (मूलश्लोकविषै) जो
“ च ” शब्द है । सो अनुक्त (नहीं कहे अन्य-
इंद्रियन)के समुदाय (ग्रहण)अर्थ है ॥ तैसें

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ९

हुये कही औ नहीं कही सकल इंद्रिय औ अंतः-
करणकी वृत्तिनकरि उपलक्षित जो (कूटस्थ)
चैतन्य है । सोइ इहां (“ प्रज्ञानं ब्रह्म ” इस
महावाक्यविषे) “ प्रज्ञान ” ऐसैं कहिये है ॥ यह
अर्थ है ॥ इस कहनैकरि । जिसकरि “ प्रसिद्धि दे-
खता है ” इस आदिवाला औ “ सर्वहीं यह प्र-
ज्ञानके नामधेय (नाम) हैं ” इस अंतवाला जो
अवांतर (आत्माके स्वरूपके बोधक) वाक्यका
समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया ॥१॥

॥२॥ “ ब्रह्म ” पदका अर्थ औ (एक-
तारूप) वाक्यार्थ ॥ २८८ ॥

॥२८८॥ ऐसैं “ प्रज्ञान ” शब्दके अर्थकूं
कहिके “ ब्रह्म ” शब्दके अर्थकूं कहै हैं:-

चतुर्मुखद्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु ।

चैतन्यमेकं ब्रह्मातः प्रज्ञानं ब्रह्म मय्यपि ॥२॥

६ पंचदशी—महावाक्याविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

[“चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु एकं चैतन्यं ब्रह्म”] चतुर्मुख (ब्रह्मा) इंद्र देवनविषै औ मनुष्य अश्व गौआदिकनविषै जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है ॥

टीका:—उत्तम जो देवादिक हैं औ मध्यम जो मनुष्य हैं औ अधम जो अश्वगौआदिक हैं तिन सर्वदेहधारिनविषै औ आकाशआदिकभूतनविषै जगत्के जन्मआदिक (स्थितिलय)का हेतुरूप जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है ॥ यह अर्थ है ॥ इस कहनैकरि “यह (ज्ञानरूप आत्मा) ब्रह्मा है । यह इंद्र है” इस आदिवाला । औ “प्रज्ञा (ज्ञानरूप चैतन्य) प्रतिष्ठा (सर्वका अधिष्ठान) है” इस अंतवाला । जो अवांतर (ब्रह्मके स्वरूपका बोधक) वाक्यका समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकारिके दिखाया ॥

ऐसैं, “प्रज्ञान” औ “ब्रह्म” इन पदनके अर्थकूं

८ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

तिसविपै गत “ अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूं) ”
इस महावाक्य (जीवब्रह्मकी एकताके बोधक
वाक्य)के अर्थके प्रकट करनेवास्ते “ अहं ”
शब्दके अर्थकूं कहै हैं:—

परिपूर्णः परात्मा ऽस्मिन्देहे विद्याऽधिकारिणि
बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन्नहमितीर्यते ३
[“ परिपूर्णः परात्मा विद्याधिकारिणि
अस्मिन् देहे बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फु-
रन् अहम् इति ईर्यते ”] परिपूर्ण परमा-
त्मा । विद्या (ज्ञान)के अधिकारी इस दे-
हविपै बुद्धिका साक्षी होनेकरि स्थित होयके
जो स्फुरता है । सो “ अहं ” (मैं) इस
पदकरि कहिये है ॥ ३ ॥

टीका:— परिपूर्ण कहिये स्वभाव (स्वरूप)
तैं देशकालवस्तुकरि अपरिच्छिन्न जो परमात्मा
है । सो इस (मायाकरि कल्पितजगत्)विपै

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ९

विद्याके अधिकारी (ज्ञानआदिकसाधनयुक्त हो-
नैकरि ब्रह्मविद्या संपादनके योग्य) इस (श्रव-
णादिकके अनुष्ठानवाले) मनुष्यादिशरीरविषे
बुद्धि (बुद्धिकरि उपलक्षित सूक्ष्मशरीर) के सा-
क्षी (अविकारीपनैसँ अवभासक) होनैकरि स्थित
होयके स्फुरता (प्रकाशमान) है । सो लक्षणसँ
“अहं” पदकरि कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥३॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॥३॥

॥२॥ “ब्रह्म” पदका अर्थ औ “अ-
स्मि” पदके अर्थकरि (एकतारूप)
वाक्यार्थ ॥ २९० ॥

॥२९०॥ “ब्रह्म” शब्दके अर्थकू कहै हैं:—

स्वतः पूर्णः परात्माऽत्र ब्रह्मशब्देन वर्णितः।
अस्मीत्यैक्यपरामर्शस्तेन ब्रह्म भवाम्यहम् ४॥

[“स्वतः पूर्णः परात्मा अत्र ब्रह्मशब्देन
वर्णितः”] स्वतः पूर्ण परमात्मा जो है । सो

१० पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

इहां “ब्रह्म” शब्दकरि वर्णन किया है ॥

टीका:— स्वतः परिपूर्ण । कहिये स्वभावतैं देशकालादिकरि अनवच्छिन्न (अपरिच्छिन्न) जो पूर्व (२८९वें श्लोकविषै) उक्त परमात्मा है । सो इहां (“अहं ब्रह्मास्मि” इस महावाक्य-विषै) “ब्रह्म” शब्दकरि वर्णन किया (लक्षणासैं कसा) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यगत “अस्मि” इस पदकरि दोनूं (“अहं” अरु “ब्रह्म” । इन) पदनके सौ-

२ भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) पदनकी समानविभक्तिके बलसैं एकही अर्थविषै जो प्रवृत्ति । सो सामानाधिकारण्य कहिये है ॥ इहां (इस वाक्यविषै) “अहं” औ “ब्रह्म” ये दोपद क्रमतैं आत्मा औ ब्रह्मरूप अर्थके बोधक हैं । यातैं भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) हैं । परंतु समान (प्रथमा) विभक्तिके बलसैं तिन दोपदनकी अखण्डएकरसत्तारूप एकहीं अर्थविषै प्रवृत्ति (लक्षणासैं वर्तना) है । सो सामानाधिकारण्य है । तिसहीसैं ब्रह्मात्माकी एकता सिद्ध है ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥५॥ ११

मानाधिकरण्यसे लभ्य (प्राप्य) जो जीव ब्रह्मकी एकता है । सो स्मरण करिये है । ऐसैं कहै हैं:-

[“अस्मि इति ऐक्यपरामर्शः”] “अस्मि” यह पद एकताका परामर्शक (स्मरण करावनेहारा) है ॥

फलित (वाक्यार्थ) कूं कहै हैं:-

[“ तेन अहम् ब्रह्म भवामि ”] तिस (हेतु) करि “ मैं ब्रह्मही हूं ॥ ४ ॥

॥३॥ सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्-गत “ तत्त्वमसि ” इस महावाक्य-का अर्थ ॥ २९१-२९२ ॥

॥ १ ॥ “तत्” पदका अर्थ ॥२९१॥

॥२९१॥ अब सामवेदकी छांदोग्यउपनि-

तिसका “ अस्मि ” पद स्मरण करावनेहारा है । अन्य अर्थका बोधक “ अस्मि ” पद नहीं है ॥

१२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत

पदगत “तैत्त्वमसि” (सो तू है) इस महावा-
क्यके अर्थके प्रकाश करनेवास्ते “तत्” (सो) प-
दके लक्ष्य (लक्षणावृत्तिके विषय) अर्थकूं कहै हैं:-
एकमेवाद्वितीयं सत् नामरूपविवर्जितम् ।

सृष्टेः पुराऽधुनाऽप्यस्य तादृक्त्वं तद्वितीयते ५

[“सृष्टेः पुरा एकम् एव अद्वितीयम् नाम-
रूपविवर्जितम् सत् । अस्य अधुना अपि तादृ-
क्त्वम् तत् इति ईर्यते”] सृष्टितै पूर्व एकहीं
अद्वितीय नामरूपरहित जो सत् था । इस
(सत्)का अब (सृष्टिके पीछे) वी तैसैपना ।
“तत्” (सो) ऐसैं कहिये है ॥ ५ ॥

टीका:- “हे सोम्य यह (जगत्) आगे
एकही अद्वितीयरूप सत्ही था” । इस श्रुति-

३ “तत्त्वमसि” यह सामवेदकी छान्दोग्यउपनिषद्के
षष्ठप्रपाठक (अध्याय) गत महावाक्य है । सो नववार
उपदेश किया है ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ १३

वाक्यकरि सृष्टिते पूर्व स्वगतादिभेदगून्य औ नाम-
रूपरहित जो सत्त्वस्तु प्रतिपादन किया है ।
इस (सत्त्वस्तु)का अब (सृष्टिते उत्तरकालविषे)
बी विचारदृष्टिसँ जो तैसैपना (स्वगतादिभेद-
रहित नामरूपवर्जित सत्पना) है । सो “तत्”
इस पदकरि कहिये (लक्षणासँ जानिये) है ॥
यह अर्थ है ॥ ५ ॥

~~~~~

॥२॥ “त्वं” पदका अर्थ औ “असि”

पदके अर्थकरि ( एकात्तारूप )

वाक्यार्थ ॥ २९२ ॥

॥२९२॥ “त्वं” पदके लक्ष्यअर्थकू कहै हैं:-

श्रोतुर्देहेंद्रियातीतं वस्त्वत्र त्वंपदेरितम् ।

एकता ग्राह्यतेऽसीति तदैक्यमनुभूयताम् ॥६॥

[“ श्रोतुः देहेंद्रियातीतं वस्तु अत्र त्वंपदे-  
रितम् ”] श्रोताके देहेंद्रियतँ अतीत जो



१४ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत

वस्तु ( सत् रूप आत्मा ) है । सो इहां “त्वं”  
पदकरि कहिये है ॥

टीका:— श्रवणादिकके अनुष्ठानसै महावा-  
क्यके अर्थकी प्रतिपत्ति ( निश्चय ) करनेहारा  
जो श्रोता है । तिसके देहइन्द्रियतैं अतीत  
कहिये देह औ इन्द्रियतैं उपलक्षित स्थूलसूक्ष्म-  
आदि ( कारण )रूप तीनशरीर हैं । तिनका  
साक्षी होनेकरि तिनतैं विलक्षण सद्रस्तु है । सो  
महावाक्यगत “त्वं” इस पदकरि लक्षित  
( लक्षणासै जान्या ) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यमें स्थित “असि” ( है ) इस प-  
दकरि “तत्” औ “त्वं” इन पदनके सामा-  
नाधिकरण्यसै लब्ध ( प्राप्त ) जो दोनूपदनके  
अर्थ (ब्रह्म औ आत्मा)की एकता (सिद्ध) है । सो  
शिष्यके ताई प्रतीति कराइये है । ऐसैं कहे हैं:—

[ “ ‘असि’ इति एकता ग्राह्यते ” ]

विनोद ७] पंचदशी-महावाक्याविवेक ॥ ५ ॥ ३५

“असि (है)” इस पदकरि एकता ग्रहण कराइये है ॥

इस निरूपणकरि सिद्ध भया जो अर्थ  
( वाक्यार्थ ) ताकुं कहै हैं:—

[" तदैक्यं अनुभूयताम् "] यार्त्तं तिनकी  
एकता अनुभव करना ॥ ६ ॥

टीका:- यातै तिन “तत्” औ “त्वं”  
पदके अर्थ (ब्रह्म आत्मा)की प्रमाणसिद्ध ए-  
कता मुमुक्षुजनोंकरि अनुभव (साक्षात्) करनी  
चाहिये ॥ यह अर्थ है ॥ ६ ॥



॥४॥ अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनि-  
पद्गत “अयमात्मा ब्रह्म” इस  
महावाक्यका अर्थ ॥२९३-२९४॥

॥१॥ “अयं” औ “आत्मा” पदका  
अर्थ ॥२९३॥

१६ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत

॥ २९३ ॥ अब क्रमतेँ प्राप्त अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत “अयमार्त्मा ब्रह्म” (यह आत्मा ब्रह्म है) । इस महावाक्यके अर्थकू व्याख्या करनेकू इच्छते हुये आचार्य । आदि-विपै “अयं” (यह) औ “आत्मा” (आप) इन दो-पदनकरि विवक्षितअर्थकू क्रमकरि दिखावै हैं:-  
स्वप्रकाशापरोक्षत्वमयमित्युक्तितो मतम् ।

अहंकाराऽऽदिदेहांतात् प्रत्यगात्मेति गीयते ७

[“‘अयम्’ इति उक्तितः स्वप्रकाशा-परोक्षत्वं मतम्”] “अयं” इस उक्ति (पद)

४ यह अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत महावाक्य है ॥ जातेँ = सर्व यह ( उक्त उँकारमात्र जगत् ) ब्रह्म है ” यातेँ “अयं आत्मा ब्रह्म (यह आत्मा ब्रह्म है) सो यह आत्मा च्यारीषादवाला है ” [ २ ] ॥ इहां जाननेकी सुगमताअर्थ धान्यके परिमाणमें उपयोगी कर्षापणप्रत्यादि-ककी न्याई पादकल्पना है । गौकी न्याई नहीं ॥ इति ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ १७

करि आत्माका स्वप्रकाशपनैकरि युक्त अप-  
रोक्षपना मान्याहै ॥

टीका:—“अयं” इस उक्ति (शब्द) करि  
साक्षीका स्वप्रकाशताकरि (युक्त) अपरोक्षपना  
अभिमत (मान्या) है ॥ अदृष्ट (धर्मअधर्म)  
आदिकनकी न्याई नित्यपरोक्षपना औ घटादि-  
कनकी न्याई दृश्यपना (परप्रकाशतायुक्त अपरो-  
क्षपना) इन दोनूं (अनात्मधर्मन) कूं आत्मातैं  
निवारण करनै कूं मूलविषै “स्वप्रकाश” औ  
“अपरोक्षपना” ये दोविशेषण हैं । ऐसैं जानना ॥

देहआदिकविषै बी आत्मशब्दके प्रयोग (यो-  
जना)के देखनैतैं । इस महावाक्यविषै “आत्म”  
शब्दकरि क्या कहनै कूं इच्छित है ? इस आकांक्षा  
(पूछनैकी इच्छा)के हुये कहै हैं:—

[“अहंकारादि देहांतात् प्रत्यक् आत्मा  
इति गीयते”] अहंकारसि आदिलेके दे-

१८ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [विदांत

दृपर्यंत जो (संघात) है। तिसरें जो प्रत्यक्  
(आंतर) है। सो “आत्मा” ऐसैं क-  
हिये है ॥ ७ ॥

टीका:—अहंकार है आदि जिस (प्राण मन  
इंद्रिय देहरूप संघात) के। सो (संघात) अहंका-  
रादि है ॥ तैसैं देह है अंत जिस (कथन किये सं-  
घात) के। सो (संघात) देहांत (देहपर्यंत) कहिये  
है ॥ तिस (अहंकारसैं आदिलेके देहपर्यंत संघात)  
तैं जो प्रत्यक् है। कहिये तिस (संघात) का अ-  
धिष्ठान होनैकरि औ साक्षी होनैकरि आंतर जो  
(चेतन) है। सो इस महावाक्यविषे “आत्मा”  
ऐसैं गाइये (कहिये) है ॥ यह अर्थ है ॥ ७ ॥

॥२॥ “ब्रह्म” पदका अर्थ औ एकता-  
रूप वाक्यार्थ ॥२९४॥

॥२९४॥ ब्राह्मण आदिकविषे बी “ब्रह्म”

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यनिवेक ॥ ९ ॥ १९

शब्दके प्रयोग ( योजना )के देखनैतैं । तिन  
( ब्रह्मणादिकन )तैं व्यावर्तन ( भेद जनावनै )  
वास्ते इस महावाक्यविषै “ ब्रह्म ” शब्दके  
विषयित्वअर्थकू कहै हैं:—

दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतस्तत्त्वमीर्यते ।

ब्रह्मशब्देन तद् ब्रह्म स्वयकाशात्मरूपकम् ८

[“ दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतः तत्त्वम्  
‘ब्रह्म’-शब्देन ईर्यते ”] दृश्यमानसर्वजग-  
त्का जो तत्त्व ( वास्तवस्वरूप ) है । सो  
“ ब्रह्म ” शब्दकरि कहिये है ॥

टीका:— दृश्य होनैकरि मिथ्यारूप जो सर्व  
( आकाशादिकजगत् ) है । विसका तत्त्व । क-  
हिये अधिष्ठान होनैकरि औ तिस ( उक्तजगत् )के  
बाधका अवधि ( सीमा ) होनैकरि पारमार्थिक  
( वास्तविक ) सच्चिदानन्दलक्षणयुक्त जो स्वरूप

२० पंचदशी-महावाक्यविवेक ॥ १ ॥ [वेदांत  
है । सो इस महावाक्यविषे “ ब्रह्म ” शब्दकरि  
कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥

वाक्य ( पदसमुदाय ) के अर्थकूं कहै हैं:-  
[ “ तद् ब्रह्म स्वप्रकाशात्मस्वरूपकम् ” ]

सो ब्रह्म स्वप्रकाश आत्मस्वरूप है ॥ ८ ॥

टीका:- जो उक्तलक्षणवाला ब्रह्म है । सोरही  
स्वप्रकाशआत्म ( अपना ) स्वरूप है ॥ यह ब्रह्म-  
आत्माकी एकतारूप वाक्यका अर्थ है ॥ ( इस-  
रीतिसे कक्षा जो च्यारिमहावाक्यनका अर्थ ब्रह्म  
( आत्माकी एकता ) ताकूं जिस जिस प्रक्रिया-  
विषे रुचि होवै तिस तिस प्रक्रियाकी रीतिसे  
विवेकवैराग्यआदिक च्यारीसाधनसंयुक्त हुये मुमु-  
क्षुजनोंनै वेदांतशास्त्र औ ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुखद्वारा  
वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थके विचारकरि पदार्थ-  
शोधनपूर्वक यथार्थ जानिके श्रवणमननादिद्वारा  
संशयविपर्ययकूं निवारण करि दृढअपरोक्षनिष्ठासे

विनोद ७] पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक २१

अज्ञान औ ताके कार्यरूप अनर्थकी निवृत्ति औ  
परमानंदकी प्राप्तिरूप जीवन्मुक्ति औ विदेहमु-  
क्तिका अनुभव करना योग्य है ॥ इति ॥ ८ ॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य

बापुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य पीतां-

वराब्धिविदुषा विरचिता पंचद-

श्या महापात्रयविवेकस्य तत्त्व-

प्रकाशिकाख्या व्याख्या

समाप्ता ॥ ५ ॥

॥ श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक ॥

मायाविद्ये विहारियेमुपाधी परजीवयोः ।

अखंडं सच्चिदानंदं परं ब्रह्मैव लक्ष्यते ॥४८॥

अर्थ.—१ऐसे २पर औ जीवकी ३उपाधि  
४माया औ अविद्याकूं छोड़िके ५अखंड सच्चि-  
दानंद परब्रह्मही लखिये है ( प्र. वि. ॥४८॥ )



चोद्यं वा परिहारो वा क्रियैतां द्वैतभाषया ।  
अद्वैतभाषया चोद्यं नास्ति नापि तैदुत्तरम् २९

अर्थ.—१ चोद्य ( प्रश्न ) वा परिहार ( उत्तर )  
२ द्वैतकी भाषाकरि ३ करिये है औ ४ अद्वैतकी  
भाषा करि चोद्य नहीं है औ ५ तिस ( प्रश्न )  
का उत्तर इसी ७ नहीं है ( पं. वि. ॥ १०४ ॥ )  
बोडं निद्रादयः सर्वेऽनुभूयन्ते नै चेतैरः ।

तैथाऽप्येतेऽनुभूयन्ते येन तं को निवारयेत् १२

अर्थ:—१ “निद्रा ( आनंदमय ) आदिक सर्व  
( कोश ) अनुभूत ( अनुभवके विषय ) होवै हैं  
२ औ तिनतैं भिन्न आत्मा अनुभूत ३ नहीं होवै  
है” । यह ( तेरा कथन ) ४ सत्य है । ५ तथापि  
६ जिस ( अनुभव ) करि ७ यह ( पंचकोश )  
अनुभव करिये हैं ८ तिस ( अनुभव ) कूं कौन  
( पुरुष ) निवारण ( निषेध ) करैगा ? कोइभी  
करी शके नहीं ( पं. वि. ॥ १८६ ॥ )

जलपापाणमृत्काष्ठवास्याकुडालकादयः ।

ईश्वराः सर्वैवेते पूजिताः फलदायिनः २०८

अर्थः—१जल । २पापाण । ३मृत्तिका । ४काष्ठ ।

वास्या ( काष्ठके छीलनैका साधन ) । कुडालक  
आदिक हैं । २यह ३सर्वहीं ४ईश्वर हैं औ  
५पूजन किये हुये ६फलदायक हैं ( चि.  
दी ॥ १०२ ॥ )

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न वद्धो न च साधकः ।

न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥२२५॥

अर्थः—न निरोध है । न उत्पत्ति है । न  
वद्ध है । न साधक है । न मुमुक्षु है । औ न  
मुक्त है । ऐसे यह परमार्थता ( वास्तवता ) है  
( चि. दी. ॥ १२९ ॥ )

अप्रवेश्य चिदात्मानं पृथक् पश्यन्नैहकृतिम् ।

ईज्जंस्तु कोटिबस्तूनि नेर्वाधो ग्रंथिर्भेदतः २६२

अर्थः—अहंकारविषे १चिदात्माकूं २अप्रवेश

२४ पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक [विदांत

करिकै । ३अहंकारकूं चिदात्मातैं ४भिन्न देख-  
ताहुआ ५कोटिवस्तुनकूं इइच्छै तौबी ७ग्रं-  
थिके भेदतैं ( साक्षी आत्माका वा बोधमोक्षका )  
८बाध ९नहीं है ( चि. दी. ॥ ५५६ ॥ )

अरब्धकर्मनानात्वाद् बुद्धानामन्यथाऽन्यथा  
वर्तनं तेन शौस्वार्थे भ्रमितव्यं न पंडितैः॥२८७

अर्थः—१प्रारब्धकर्मके नाना होनैकरि । बुद्ध  
( ज्ञानिन )का अन्यथा अन्यथा ( और और  
प्रकारसैं ) वर्तना है । तिस ( विछक्षणवर्तनै )  
करि २पंडितजनोर्नै ३शास्त्रके अर्थविषे ४भ्र-  
मणा ( भ्रांत होना ) योग्य नहीं है ( चि.  
दी. ॥ ५८१ ॥ )

आत्मानं चेद् विजानीयादयमस्मीति पुरुषः ।  
किमिच्छेत्कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत् ॥

अर्थः—१पुरुष ( जीव ) २आत्माकूं ३“यह  
मैं हूं” इसप्रकार ४जब जानै तब ५किस ( भो-

ग्यविषय)कूं इच्छता हुआ किस (भोक्ता)के काम (भोग)अर्थ शरीरके पीछे ज्वर (संताप)कूं पावै ? ( तृ. दी. ॥ १८५ ॥ )

देहोऽऽत्मज्ञानवत् ज्ञानं देहोऽऽत्मज्ञानबाधकं।  
आत्मन्येव धेवेद् यस्य स नैच्छन्नपि मुच्यते २०

अर्थ:—१ देहरूप आत्माके ज्ञानकी न्याई २  
आत्माविषयी ३ देहात्मज्ञानका बाधक ४ ज्ञान  
५ जिसकूं ६ होवै । ७ सो नहीं इच्छता हुआ  
भी मुक्त होवै है ( तृ. दी. ॥ १०४ ॥ )

जनकादेः कथं राज्यमिति चेद् दृढबोधतः ।  
तैथा तैवाऽपि चेत् तर्कं पठ यद्वा कृपिं कुरु १३०

अर्थ:—१ “जनकादिककूं राज्य कैसे भया?”  
ऐसे जो कहै । तो दृढबोधतै (जनकादिककूं  
राज्य भया ) । २ तैरेकूं भी जो ३ तैसै (दृढबोध)  
होवै तो ४ तर्ककूं पठन कर यद्वा कृपि (लेती)कूं  
कर ( तृ. दी. ॥ ७१४ ॥ )

२६ पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक [विदांत

अवश्यं भावि भावानां प्रतीकारो भवेद् यदि ।  
तदा दुःखैर्न लिप्येरन् नैलरामयुधिष्ठिराः १५

अर्थः—१ अवश्य होनैहारे जो भाव ( दुःखा-  
दिक ) हैं । तिनका प्रतीकार ( निवृत्तिका उ-  
पाय ) २ जब ३ होवै । ४ तब ५ नल राम औ  
युधिष्ठिर ६ दुःखनकरि ७ लिप्त होते ८ नहीं ( सो  
बी दुःखप्रस्त भये । यार्तै सो अनिवार्य है )  
( तृ. दी. ॥ ७४० ॥ )

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिप्रपञ्चं यत् प्रकाशते ।  
तद् ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबंधैः प्रमुच्यते २१३

अर्थः—१ “जो ब्रह्म । २ जाग्रत्—स्वप्न—सु-  
षुप्ति—आदिकप्रपञ्चकूं ३ प्रकाशता है । सो ब्रह्म  
मैं हूं” ऐसे जानिके सर्वबंधनर्तै मुक्त होवै है  
( तृ. दी. ॥ ७९७ ॥ )

दुःखिनोऽज्ञाः संसरंतु कामं पुत्राद्यपेक्षया ।  
परमानंदपूर्णोऽहं संसरामि किमिच्छया ॥ २५५

विनोद ७] पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक २७

अर्थ:—१दुःखी जो अज्ञानी हैं । तो २जैसे  
इच्छा होवे तैसे पुत्रादिकनकी अपेक्षासे ३इस-  
लोकसंबंधी व्यवहारकूं करदू औ ४परमानंद-  
करि पूर्ण जो मैं हूं सो ५किसकी इच्छा करि  
६व्यवहारकूं करों ? ( तृ. दी. ॥ ८३९ ॥ )

नित्यानुभवरूपस्य को मे<sup>१</sup> चाऽनुभवः पृथक् ।  
कृतं कृत्यं प्रापणीयं प्राप्तमित्येव निश्चयः १६६

अर्थ:—१नित्य ( उत्पत्तिनाशरहित ) अनु-  
भवरूप २मेरेकूं ३कौन ४अनुभव भिन्न है ?  
( कोई बी नहीं ) ॥ जो ५करनैयोग्य था सो  
६किया औ ७ प्राप्त होनैयोग्य था सो पाया ।  
यही मेरा निश्चय है ( तृ. दी. ॥ ८९० ॥ )

अनुभूतेरभावेपि ब्रह्मास्मीत्येव चिंतयताम् ।  
अप्येसत्प्राप्यते ध्यानान्नित्याप्तं ब्रह्म किं पुनः

अर्थ:—१अनुभूतिके अभाव हुये बी “ मैं  
ब्रह्म हूं ” ऐसीही चिंतन करना । २असत् ( अ-

२८ पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक [वेदांत

विद्यमानं वस्तु ) ३वी ४ ध्यानर्त ९ प्राप्त होवै है ।  
तब ६ फेर ७ नित्यप्राप्त जो ब्रह्म सो ध्यानर्त प्राप्त  
होवै यामैं क्या ( कहना ) है ( ध्या. दी. ॥ १११३ ॥ )  
भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यति सर्वसंशयाः ।

१ धीयंते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥७

अर्थ:— १ तिस २ परावर ( परमात्मा ) के ३ दृष्ट  
( देखे ) हुये ४ इस ( पुरुष ) का ५ हृदयग्रंथि ६  
भेदनकं पावता है औ ७ सर्वसंशय छेदन होवै  
है ९ औ १० कर्म ११ क्षीण ( नाश ) होवै है  
( ब्र. यो. ॥ ११४९ ॥ )

असाध्यः कस्यचिद् योगः कस्यचिज्ज्ञाननिश्चयः  
इत्थं विचार्य मार्गो द्वौ जंगाद परमेश्वरः ॥८३

अर्थ:— १ किसी ( अधिकारी ) कूं योग २ अ-  
साध्य ( दुष्कर ) है औ ३ किसी कूं ज्ञानका नि-  
श्चय असाध्य है । ऐसैं विचार करिके ४ परमे-  
श्वर ( श्रीकृष्ण ) । ५ दोनूं ( योग औ विवेकरूप )  
६ मार्गनकूं ७ कहते भये ( ब्र. आ. ॥ १३५९ ॥ )

शरीफ सालेपहंमद-बेरावल (काठियावाड).

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहांसे मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्थुपेणलका डाककामी-शन परेगा ॥ यह सर्वप्रथम सारे हिंदुस्थानमें जहाँ जहाँ पुस्तक बेचनेवाले हैं उनोंसे भी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावली तथा घड़ी अकारादि अनुक्रमणिका-

सहित तृतीयावृत्ति ... .. ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ... .. ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ... .. ३

श्रीसूत्रीकामध्यावक्रान्ता मूलकी मापासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... .. १॥

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ... .. ७॥

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी मापा । दो विभागमें

( गोरेही ग्रंथ रहे हैं ) ... .. १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ७॥

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलमात्र.... .. ०॥